किसान संघर्ष

मार्च-अप्रैल 2021

टिकरी बॉर्डर किसान ट्रैक्टर परेड के दौरान किसान सभा के महासचिव हनान मौल्ला, किसान सभा हरियाणा के उपाध्यक्ष इंद्रजीत सिंह और का. जोगिन्दर शर्मा

शाहजहांपुर में किसान ट्रैक्टर परेड के दौरान किसान सभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अशोक ढवले, संयुक्त सचिव के.के. राघेश और बीजू कृष्णन, खेतमजदूर यूनियन के संयुक्त सचिव विक्रम सिंह, एसएफआई के राष्ट्रीय अध्यक्ष वी.पी. शानु और महासचिव मंयुक विश्वास

विषय सूची

किसान आंदोलन शानदार 150वें दिन की ओर	**-हन्नान मौल्ला**	3
नई बुलंदियों को छूता ऐतिहासिक किसान आंदोलन	**-इन्द्रजीत सिंह**	7
संघर्ष की नयी भाषा और व्याकरण गढ़ते किसान आन्दोलन की मौलिक विशेषताएँ	**-बादल सरोज**	12
भारतीय किसानों और खेती के विध्वंस के कानून	**-डी पी सिंह**	16
किसान संघर्ष और पूंजीवाद का संकट	**-पी.कृष्णा प्रसाद**	23
मैं घास हूँ - मैं आपके हर किए-धरे पर उग आऊंगा	**-मनोज कुमार**	26
लेबर कोड्स में प्रवासी मजदूरों के लिए निराशा के सिवा कुछ नहीं	**-विक्रम सिंह**	33
बिजली (संशोधन) विधेयक, 2020 से किसानों पर 1 लाख करोड़ रु0 का बोझ	**-तेजल कानिटकर**	35
महिला किसान दिवस: हजारों महिलाओं ने किया विरोध प्रदर्शनों का नेतृत्व	**-मरियम ढवले**	38
आईटीओ से लाल किले तक वाया अर्णब गेट कारपोरेट के हरम की साजिशों के कुहासे में गणतंत्र	**-पंकज मेघ**	42
किसान-मजदूर पदयात्राओं से सामने आया इस्पाती संकल्प-जीतने तक लड़ेंगे	**-वीजू कृष्णन**	45
केंद्रीय बजट 2021-22 पर अखिल भारतीय किसान सभा का बयान		48
महाराष्ट्र : जबर्दस्त जन कार्रवाइयों ने किया देशव्यापी किसान संघर्ष को और मजबूत	**-अशोक ढवले**	50
ग्वालियर : धरने पर संघी हमले के बाद किसान आंदोलन ने और पकड़ा जोर		52
कर्नाटक में भी चल रहा है दूसरा स्वतंत्रता संग्राम	**-वसंत के**	53
कृषि विरोधी नीतियों के खिलाफ छत्तीसगढ़ में भी शुरू हुई किसान पंचायतें		54
दमन के बीच किसान पंचायतों के साथ कृषि मंत्री के गृह जिले में जोर पकड़ता किसान आंदोलन		55
इटावा : किसान पंचायतों का आयोजन, कृषि कानून किसानों के गले का फंदा		56
बिहार के समस्तीपुर और दरभंगा में विशाल किसान महापंचायतें		57
किसान आंदोलन में उत्तराखंड		58
इतिहास के पन्नों से -- पंजाब में बेटरमेंट लेवी के खिलाफ संघर्ष		59

संपादकीय

किसान संघर्ष का यह अंक एक लम्बे अन्तराल के बाद आ रहा है और इस दौरान देश के सामाजिक और राजनैतिक परिदृश्य में काफी कुछ घटित हुआ है। देश जब महामारी से लड़ रहा है उस दौर में मोदी सरकार द्वारा पहले तो बिना सोचे समझे तालाबंदी (लॉकडाउन) की गई फिर उस के बाद महमारी की आड़ में अपने जनविरोधी फ़ैसलों को लोगों पर थोप दिया।

इन फैसलो में से किसान विरोधी तीन कृषि कानून भी है जिन्हें पहले अध्यादेश के तौर पर लाया गया और बाद में राजसभा में जनतंत्र का गला घोट कर पास करा काननू बना दिया गया। मजदूर संगठनों के भरी विरोध के बावजूद मजदूर विरोधी चार श्रम सहिताएं भी लाया जा रहा है और मजदूर आदोलन द्वारा सालो के संघर्षो से अर्जित अधिकारों को पलटने की कोशिश हो रही है। अपने विरोध को कुचलने के लिए किसी भी हद तक चले जाने की मोदी सरकार की रवायत जारी है और किसानों–मजदूरों पर थोपे गए कानूनों के विरोध को दबाने के लिए झूठ का पूरा महल गढ़े गए। सभी तरह की असहमति की आवाज को दबाने के लिए मीडिया व शासन के ढांचे का इस्तेमाल करते हुए आन्दोलन को तोड़ने व बदनाम करने के प्रयास किये जा रहे हैं। कार्यकर्ताओं और पत्रकारों को गिरफ्तार कर उन पर मुक़दमे चलाए जा रहे है। पर तमाम मुश्किलों को झेल कर भी कृषि कानूनों के खिलाफ आन्दोलन जारी है और हज़ारों किसान पिछले चार महीनों से दिल्ली के बॉर्डरो पर पड़ाव डाले हुए है। देश भर में किसान पंचायते चल रहे है जिन में हजारो किसान शिरकत कर रहे है। हरियाणा की भाजपा की अगुवाई वाली सरकार के मुख्यमंत्री व उप–मुख्यमंत्री का जनता हर जगह बहिष्कार कर रही और अन्य राज्यों में भी भाजपा की सरकार के मंत्रियो व प्रतिनिधियो को जनता के गुस्से को झेलना पड़ रहा है।

पहले से ही सुस्त पड़ी अर्थव्यवस्था में कोविद–19 महमारी और तालाबंदी ने बहुत ही गहरी चोट मारी जिस कारण आम जनता का जीवन दूभर हो गया। महगाई असमान छू रही है, पेट्रोल, डीजल व गैस के दाम अपनी रिकॉर्ड ऊंचाईयों पर है। ऐसे में लाखो लोगों की नौकरियां चली गई, बेरोजगारी अपने चरम पर है और नौजवान पक्के रोजगार के लिए अभियान व आन्दोलन चलाए हुए है। पर सरकार अपनी निजीकरण की निति को आगे बढ़ते हुए इस के विपरीत पक्के रोजगार को ठके, अनियमित, कच्चे रोजगार में तब्दील कर रही है।

यह अंक मुख्यतः मौजूदा किसान आन्दोलन को धयान में रख कर ही प्रकाशित किया जा रहा है। इस के जायदातर लेख इस से ही संबधित है। आशा है कि किसान संघर्ष का यह अंक देश के हर कोने में बैठे किसान को इस आन्दोलन के स्वरुप को समझने में मदद करेगा और इस आन्दोलन के आगे बढ़ने में भी सहयोगी होगा।

किसान आंदोलन शानदार 150वें दिन की ओर

--हन्नान मौल्ला

गत 6 मार्च को ऐतिहासिक किसान आंदोलन ने सौ दिन पूरे कर लिए हैं और अब डेढ़ सौ दिनों की ओर है। यह हर लिहाज से महत्वपूर्ण है।

आजादी के बाद का यह सबसे बड़ा किसान आंदोलन है और यह देशव्यापी है। सही अर्थों में यह एक अखिल भारतीय किसान संघर्ष है।

यह भारत का सबसे एकजुट जनतांत्रिक आंदोलन है जिसमें करीब 500 भिन्न-भिन्न प्रकृतिवाले किसान संगठन शामिल हैं और वे अभी तक अपनी असाधारण एकता बनाए हुए हैं। किसी भी लंबे संघर्ष में मतभेदों का उभर आना आम बात है, लेकिन इस आंदोलन में ऐसा कुछ भी देखने में नहीं आया है।

ऐसा विराट अखिल भारतीय आंदोलन पूरी तरह शांतिपूर्ण ढ़ंग से चल रहा है। हिंसा की कोई एक भी घटना नहीं हुयी है क्योंकि हमारा नारा है कि 'अगर शांति रही तो किसान जीतेंगे, अगर हिंसा हुई तो मोदी जीतेगा।' किसानों ने इस विचार को जज्ब कर लिया है और इसे गंभीरता से लागू कर रहे हैं। इसलिए, देश के जनतांत्रिक आंदोलन के इतिहास में यह अभी तक का सबसे शांतिपूर्ण आंदोलन रहा है।

इसके चलते सरकार को इस पर हमला करने का कोई भी बहाना नहीं मिल रहा। अंतत: उन्होंने इस आंदोलन को बदनाम करने के लिए एक षड्यंत्र रचा और अपने लोगों की मदद से 'लाल किला' की घटना को अंजाम दिया। यह बात सब लोग जानते हैं कि इस घटना को केंद्र सरकार और उसकी पुलिस ने अंजाम दिया था।

यह ऐसा पहला अखिल भारतीय किसान आंदोलन है, जिसमें देश भर के लाखों किसान भाग ले रहे हैं। बेशक इससे पहले भी कुछ राज्यों में या देश के कुछ हिस्सों में बड़े-बड़े किसान आंदोलन हुए हैं, लेकिन वे कभी भी ऐसा अखिल भारतीय स्वरूप नहीं ले पाए थे।

भाजपा सरकार और उसके गोदी मीडिया ने इसे 'पंजाबी आंदोलन' के तौर पर पेश करने की पूरी कोशिश की थी। निश्चित रूप से पंजाब के किसान इस आंदोलन की अग्रिम पंक्तियों में हैं और इस संघर्ष में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। लेकिन यह अकेले पंजाब का आंदोलन नहीं है। यह अखिल भारतीय आंदोलन है और जाहिर है पंजाब इसका अगुवा है।

देश के ज्यादातर हिस्सों में हजारों की तादाद में किसान इस आंदोलन में भाग ले रहे हैं। देश भर में करीब 600 जिलों में 'जेल भरो' आंदोलन का आयोजन किया गया। जो अखिल भारतीय हड़ताल हुयी उसमें 30 से 35 करोड़ लोगों ने-किसानों और मजदूरों ने भाग लिया।

सभी राज्यों में 'रास्ता रोको' आंदोलन का आयोजन किया गया और करीब 600 जगहों पर 'रेल रोको' का आयोजन किया गया। इन संघर्षों ने सरकारी प्रचार के विपरीत, इस संघर्ष का अखिल भारतीय चरित्र स्थापित किया। इन सौ दिनों में ये सभी संघर्ष आयोजित किए गए हैं।

इस आंदोलन ने पूरे देश की जनता के तमाम तबकों का समर्थन हासिल किया है। सभी राष्ट्रीय ट्रेड यूनियनों तथा फेडरेशनों ने इस आंदोलन को अपना पूरा समर्थन दिया है और लाखों - लाख मेहनतकश, इस आंदोलन की विभिन्न कार्रवाइयों में खुद शामिल रहे हैं।

पहली बार ऐसा हुआ है कि किसी संघर्ष में इतनी व्यापक मजदूर-किसान एकता सामने आयी है। खेतमजदूरों तथा जनता के निर्धनतम तबकों ने इस संघर्ष में शामिल होकर इसे ताकत दी है। महिलाएं, भारी उत्साह के साथ इस आंदोलन में भाग ले रही हैं और देश के विभिन्न हिस्सों में वे हजारों की संख्या में आंदोलन में शामिल हो रही हैं।

छात्र और युवा भी बढ़ती तादाद में इस आंदोलन में शामिल हो रहे हैं। छोटे व्यापारियों तथा खुदरा व्यापारियों ने इस आंदोलन को अपना समर्थन दिया है। किसी संघर्ष को इस तरह के व्यापक समर्थन की यह सार्वभौम प्रकृति भी इस ऐतिहासिक जनतांत्रिक आंदोलन की एक और शानदार विशेषता है।

इस संघर्ष ने सिर्फ भारतीय जनता के ही तमाम तबकों का ध्यान नहीं आकर्षित किया है बल्कि इसे विभिन्न देशों से भी अभूतपूर्व समर्थन मिला है। यह विश्वव्यापी समर्थन अंतर्राष्ट्रीय स्तर की हस्तियों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं, बुद्धिजीवियों, संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न संगठनों, दुनिया के करीब 100 देशों में बसे

भारतीय मूल के लोगों और विभिन्न देशों के सांसदों आदि से मिल रहा है। इससे पहले, किसी भी राष्ट्रीय आंदोलन को इतनी व्यापक अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता नहीं मिली।

इस व्यापक, अनूठे और एकजुट संघर्ष ने देश की विभाजनकारी, सांप्रदायिक तथा जातिवादी शक्तियों को चुनौती दी है। भाजपा और आरएसएस, जाति और संप्रदाय के आधार पर लोगों को विभाजित करने में लगे हुए हैं। लेकिन मौजूदा किसान आंदोलन ने 'किसान' नाम से एक नयी व्यापक तथा समावेशी पहचान बनायी है। किसान कह रहे हैं कि वे सब 'किसान' हैं, फिर चाहे उनकी जातिगत या धार्मिक पहचान कुछ भी हो।

सांप्रदायिक शक्तियों ने उत्तरप्रदेश के मुजफ्फरनगर में जाटों और मुसलमानों के बीच दंगे कराए थे, जिनके चलते उनके बीच दीर्घावधि विभाजन पैदा हो गया था। लेकिन, अब दोनों समुदाय और उनके नेता खुलेआम कह रहे हैं कि उन्होंने गलती की है और कि वे आरएसएस के षड्यंत्रों का शिकार हो गए थे और अब जाटों और मुसलमानों के बीच एक व्यापक एकता उभरकर सामने आयी है।

पंजाब तथा हरियाणा की जनता के बीच उनकी पहचान को लेकर और जल विवाद आदि को लेकर, झगड़े कराए गए थे। लेकिन इस आंदोलन ने उन्हें एकजुट कर दिया। जब हरियाणा की भाजपा सरकार ने पंजाब के किसानों पर हमले किए तो हरियाणा के किसान उनके साथ दृढ़ता से एकजुट होकर खड़े हो गए और उनके बीच एक नयी एकता बनी। जनतंत्र के लिए पहचान की व्यापक एकता जरूरी है और इस आंदोलन ने ऐसी एकता बनायी है, जो हमारी धर्मनिरपेक्ष जनतांत्रिक एकता को मजबूत बनाएगी।

तानाशाह फासीवादी भाजपा सरकार ने इस आंदोलन के खिलाफ अनेक हमले आयोजित किए। जिस किसी बुद्धिजीवी, कलाकार, एक्टिविस्ट, मानवाधिकार कार्यकर्ता, युवा, छात्र, पत्रकार, लेखक आदि ने किसान आंदोलन का समर्थन किया, उसे ही इस सरकार के हमलों को झेलना पड़ा है।

एक्साइज विभाग, ईडी, एनआइए, सीबीआइ, पुलिस आदि का उनके खिलाफ व्यापक तौर पर इस्तेमाल किया गया, उन्हें 'देशद्रोही' करार दिया गया, उन पर राजद्रोह के आरोप लगाए गए, उन्हें गिरफ्तार किया गया और जेलों में डाला गया। और यह सब जनतांत्रिक सोच-विचारवाले लोगों को आतंकित करने के लिए किया गया।

इस किसान आंदोलन ने नागरिकों के जनतांत्रिक तथा संवैधानिक अधिकारों पर हुए ऐसे तमाम हमलों की निंदा की। बड़ी संख्या में किसान जेल में हैं और ज्यादातर नेताओं पर राजद्रोह के मामले बनाए गए हैं। यह स्थिति इमरजेंसी के दौर से भी खराब है और किसान आंदोलन को सरकार की ओर ऐसे बर्बर हमलों का सामना करना पड़ रहा है। लेकिन किसान, आंदोलन के नेता और किसान संगठन दृढ़ता से अपने पांव जमीन जमाए हुए हैं और हर तरह के हमलों का सामना करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हैं। हमारे जनतांत्रिक

आंदोलन के इतिहास में यह भी एक अनूठी बात है।

सौ दिन पूरे होने के बाद आंदोलन अब अपने तीसरे चरण में पंहुच गया है। पहले चरण में इसे अनेक हमलों का, बाधाओं का और धमकियों का सामना करना पड़ा था। लेकिन इन तमाम बाधाओं को पार कर किसानों ने आगे बढ़ना जारी रखा और दिल्ली के बॉर्डरों पर शांतिपूर्ण ढ़ंग से धरनों पर बैठ गए और फिर 26 जनवरी तक निरंतर अपनी ताकत बढ़ाते रहे।

गणतंत्र दिवस पर सरकार द्वारा रचे गए षड्यंत्र के बाद ऐसा लग रहा था कि आंदोलन थोड़ा शांत हो गया है। लेकिन गाजीपुर बॉर्डर पर सामने आयी सरकार की दूसरी साजिश ने नयी ताकतों के साथ आंदोलन में नयी जान फूंक दी। लोगों की और ज्यादा लामबंदी के साथ दिल्ली के सभी बॉर्डरों पर धरने और मजबूत हो गए। इस दूसरे चरण ने सरकार के हमलों को चुनौती दी। इसके बाद थोड़ी मंदी आयी और अब यह आंदोलन अपने तीसरे चरण में है। अब अपने सौ दिवसीय समारोहों के साथ यह धीरे-धीरे नयी ताकत ग्रहण कर रहा है।

आंदोलन के सौंवें दिन 6 मार्च को आउटर रिंग रोड तथा केएमपी पर 'चक्का जाम' का आयोजन किया गया और काले झंडों के साथ पूरे देश में काले कानूनों और किसानविरोधी सरकार के खिलाफ विरोध दिवस मनाया गया।

सरकार के किसानविरोधी रुख के चलते ही यह आंदोलन लंबा खिंचता जा रहा है। संयुक्त किसान मोर्चा (एसकेएम) ने घोषणा की है कि तीन काले कानूनों को वापस लेने और एमएसपी कानून बनाने का मुद्दा किसानों और सरकार के बीच का मुद्दा है। इनके बीच कोई भी तीसरा पक्ष नहीं होना चाहिए। इसी वजह से एसकेएम ने अदालत को भी मध्यस्थ के रूप में स्वीकार नहीं किया था।

लेकिन सरकार इस मामले में जानबूझकर देरी कर रही है और बातचीत के ग्यारह दौर में भी कोई समाधान नहीं निकल पाया। सरकार अपनी टालमटोल की कार्यनीतियों से आंदोलनकारी किसानों को थका देना चाहती है। पिछले 40 दिन से कोई बातचीत नहीं हुयी है। हालांकि प्रधानमंत्री ने घोषणा की है कि सरकार और किसानों के बीच सिर्फ एक फोन कॉल की दूरी है।

हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि बातचीत के जरिए ही समस्या का हल निकाला जा सकता है और कि हमें इस बातचीत का इंतजार है। पुराने प्रस्ताव को हम महीनों पहले ही ठुकरा चुके हैं और हम अपेक्षा करते हैं कि सर्वोच्च्य अथॉरिटी के रूप में प्रधानमंत्री कुछ बेहतर प्रस्तावों के साथ आगे आएंगे और बातचीत के लिए एक सौहार्द्रपूर्ण माहौल बनाया जाएगा।

जब आंदोलन पर हमला तेज हो तो बातचीत के लिए अनुकूल माहौल नहीं हो सकता। लेकिन सरकार की भूमिका निदंनीय है। सरकार की कोशिश हमेशा यही रही कि आंदोलन को कुचल दिया जाए। किसानों के मार्च को रोकने में विफल होने के बाद उन्होंने किसानों को दोषी ठहराते हुए निरंतर झूठा प्रचार किया।

उन्होंने कहा कि खालिस्तानी आंदोलन की अगुवाई कर रहे हैं, कभी कहा कि माओवादी उसकी अगुवाई कर रहे है, कभी कहा कि आंदोलन पर वामपंथियों का नियंत्रण है, कभी कहा कि राजनीतिक पार्टियां इसे चला रही हैं, कभी कहा कि पाकिस्तान इसे बढ़ावा दे रहा, कभी कहा कि चीन इसकी मदद कर रहा है और कभी कहा कि यह जवानों के खिलाफहै।

जब इन सारी झूठी बातों की एसकेएम ने निंदा की और उन्हें बेनकाब कर दिया तो सरकार ने अपने दलालों का इस्तेमाल करते हुए एक नया षड्यंत्र रचा और राष्ट्रीय ध्वज का अपमान करने के रूप में लाल किले की घटना को अंजाम दिया। लेकिन लोग जल्द ही इसे समझ गए और शांतिप्रिय, अनुशासित तथा दृढ़प्रतिज्ञ किसानों को दोषी ठहराने के लिए रचे उनके इस षड्यंत्र के लिए, लोगों ने उसकी व्यापक रूप से निंदा की।

उसके बाद से किसानों के साथ बातचीत भी बंद है। लेकिन किसान अपने संघर्ष को जारी रखने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हैं। इन सौ दिनों में उन्होंने अभूतपूर्व कठिनाइयों को झेला है। उन्होंने शून्य तापमान की ठंड झेली है, उन्होंने बारिश झेली है। इन सौ दिनों में हमारे 250 बहादुर किसानों ने अपने प्राण गंवाए हैं।

लेकिन इस अमानवीय सरकार को किसानों की इन पीड़ाओं की कोई चिंता नहीं है और वह उनकी समस्याओं को हल करने के लिए कोई कदम नहीं उठा रही है। लोकतंत्र में एक चुनी हुयी सरकार अपने नागरिकों की आवाज सुनती है, उनकी मदद करने की कोशिश करती है, लेकिन इस मामले में इस भाजपा सरकार की भूमिका पूरी तरह से अलोकतांत्रिक, तानाशाहीपूर्ण तथा फासीवादी रही है।

100 दिन के इस लंबे, कठिन तथा दृढनिश्चयी संघर्ष से किसानों ने अनेक सबक सीखे हैं। अभूतपूर्व कठिनाइयों से उन्होंने राज्य शक्ति की दमनकारी प्रकृति को समझा है। उन्होंने समझा है कि आरएसएस के नेतृत्ववाली भाजपा सरकार का चरित्र पूरी तरह से कार्पोरेटपरस्त है। वे किसान आधारित कृषि को नष्ट कर देना चाहते हैं और अडानी, अंबानी तथा अन्य देशी-विदेशी इजारेदार घरानों तथा कार्पोरेट कंपनियों की शह पर, कार्पोरेट आधारित कृषि

की स्थापना करना चाहते हैं। बुनियादी रूप से वे किसानविरोधी, मजदूरविरोधी और जनविरोधी हैं। वे ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाने के लिए कार्पोरेट घरानों की राह हमवार करने के लिए और आम आदमी की लूट को आसान बनाना सुनिश्चित करने के लिए, कृषि व्यवस्था में इस बदलाव के जरिए शोषण की व्यवस्था को मजबूत बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

इन 100 दिनों में किसानों ने यह सीखा है कि यह सरकार किसानों तथा आम जनता के तमाम संवैधानिक तथा जनतांत्रिक अधिकारों को नष्ट करने पर आमादा है और जनता तथा उसके जनतांत्रिक आंदोलन को कुचलने के लिए तमाम दमनात्मक कदमों का इस्तेमाल करती है। किसानों को यह भी समझ में आ गया है कि अपनी जायज मांगों को मनवाने के लिए उन्हें इस सरकार की जनविरोधी नीतियों के खिलाफऔर लंबा, सघन तथा दृढ़निश्चयी संघर्ष निर्मित करना होगा।

उन्होंने यह भी समझ लिया है कि सरकार को झुकने पर मजबूर करने के लिए, एक अखिल भारतीय संघर्ष जरूरी है और इसीलिए विभिन्न राज्यों में महापंचायतों का आयोजन किया जा रहा है, जिनमें लाखों लोग शामिल हो रहे हैं। यही पंचायतें सरकार पर समुचित दबाव बनाएंगी। यही पंचायतें दिखाएंगी कि किसान सिर्फ 'अन्नदाता' नहीं है, वह 'वोटदाता' भी है।

अगर सरकार तथा उसके गुंडों ने उन्हें ठुकराया तो वे अपने दमनकर्ताओं को फूलमालाएं नहीं पहनाएंगे। किसान यह भी समझ गए हैं कि आत्महत्या करना संकट से निकलने का रास्ता नहीं है, बल्कि संघर्ष में बहादुरी के साथ लड़ मरने से ही सरकार को मात दी जा सकती है। उनकी यह समझ तब और बढ़ गयी जब उन्होंने यह कहा कि वे छ: महीने तक आंदोलन चलाने की पूरी तैयारी के साथ आए हैं और जब तक उनकी मांगें नहीं मान ली जातीं, तब तक वे वापस नहीं जाएंगे।

इस 100 दिवसीय संघर्ष जैसी इतिहास में और कोई दूसरी मिसाल नहीं है। अतीत के किसी और आंदोलन से हम इसकी तुलना नहीं कर सकते हैं। यह आंदोलन अपने आपमें अनूठा है और इतिहास बना रहा है। यह भविष्य के किसी भी संघर्ष को मापने का पैमाना होगा और भावी पीढ़ियों के लिए एक गंभीर सबक होगा।

आइए, इस संघर्ष को जीत तक लेकर जाएं। □

नई बुलंदियों को छूता ऐतिहासिक किसान आंदोलन

–इन्द्रजीत सिंह

अभूतपूर्व भारत बंद के साथ 26 मार्च को किसान आंदोलन के चार महीने हो गए हैं। इस दौरान सर्दी, गर्मी, बारिश, बीमारी और दुर्घटना के शिकार होकर इस आलेख के लिखने के समय तक 325 किसान आंदोलनकारी शहीद हो चुके हैं।

निश्चित तौर पर यह एक ऐतिहासिक आंदोलन बन गया है जिसन दुनियाभर को प्रभावित किया है। यह सही है कि इसको ऐतिहासिक बनाने वाले कारक तो एक तरह से गत चार महीने के दौरान ही निर्मित होकर सामने आए हैं लेकिन इस आंदोलन को आधार प्रदान करने वाली पृष्ठभूमि लंबी है। उस पृष्ठभूमि से अलग करके इस आंदोलन के महत्व और इसकी ताकत का सही–सही आंकलन नहीं किया जा सकता।

वर्तमान किसान आंदोलन की कुछ विशेषताएं तो ऐसी हैं जो कि ऊपरी तौर पर दिख रही हैं। परंतु कई सारी ऐसी सामाजिक प्रक्रियाएं इसमें घटित हो रही हैं जिनको समझना सभी संघर्षशील व्यक्तितियों व संगठनों के लिए जरूरी है। दसअसल उन प्रक्रियाओं में ही वे क्षमताएं भी निहित हैं जो इस आंदोलन की सफलता को सुनिश्चित ही नहीं करेंगी बल्कि आने वाले दौर में जनवादी आंदोलनों के लिए मील का पत्थर भी बनेंगी।

आने वाले दशकों के दौरान इस किसान आंदोलन पर देश–दुनिया में शोध होंगे। इसकी समीक्षाएं और विश्लेषण होंगे। अखिल भारतीय किसान सभा की ओर से आंदोलन के दौरान काफी कुछ लिखा गया जिसके आधार पर समय समय पर फौरी कार्यभार और प्राथमिकताएं तय करने में मदद मिलती रही है।

गाँवों से कैसे घिरी दिल्ली : 26 नवंबर 2020 से देश की राजधानी की सीमाओं पर अपनी ट्रालियों समेत हजारों किसानों के इन पड़ाओं को हम संघर्ष में तप रहे गाँवों भी कह सकते हैं। बार्डरों पर ही इन गाँवों ने नए साल 2021 में प्रवेश किया। लगभग 500 छोटे–बड़े संगठनों ने एक साथ आकर जिस तरह इस आंदोलन को हकीकत में खड़ा किया, यह बात जितनी आश्चर्यचकित करने वाली है ऐसे ही बहुत सारी विशेषताएं हैं जो अपने आपमें हमने अपने आंदोलनों में पहले कभी नहीं देखी थी। जैसे महिला आंदोलनकारियों का इतनी बड़ी संख्या में किसान आंदोलन से साथ जुड़ना. इसी प्रकार हजारों लोगों के लिए रोजाना इतनी बड़ी मात्रा में राशन–पानी, सब्जी, दवाईयां, बिस्तर इत्यादि की सप्लाई जारी रखना अपने आपमें उन क्षमताओं को दिखाता है जो जनांदोलनों के साथ निर्मित होती हैं।

पंजाब की अगुवाई : इस पूरे विमर्श में एक बात जो शुरूआती दौर में सबसे अधिक चर्चा में रही वह आंदोलन की पंजाब से हुई पहल को लेकर थी। इसमें दो राय नहीं कि 3 जून 2020 को कृषि के तीन अध्यादेश जारी किए जाने के उपरांत पंजाब के 30 से अधिक किसान संगठनों ने आंदोलन शुरू किया जो लगभग दो महीने तक जुझारू कारवाईयों को अंजाम दे रहा था। रेल रोको, रोड़ रोको और टोल फ्री तथा बड़े मॉलों का घेराव इत्यादि इनमें शामिल थे। इस दौरान पंजाब के सभी इलाकों में बड़ी संख्या में किसानी को लामबंद करने में मदद मिली। इसका मतलब यह नहीं है कि अन्य प्रदेशों में तीन कानूनों के खिलाफ गतिविधियां नहीं थी। हरियाणा में शुरू से ही कानूनों की प्रतियां जलाने से लेकर धरने–प्रदर्शनों और 'हरियाणा बंद' जैसी बड़ी कारवाईयां भी हो रही थी।

वैसे भी पंजाब के बाद हरियाणा से ही ज्यादा बड़ी संख्या में किसान इस आंदोलन में भाग लेते रहे हैं। आगे इसका विस्तार उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, राजस्थान, मध्यप्रदेश, कर्नाटक आदि में भी होता गया। परंतु यह वास्तविकता है कि हरियाणा, पंजाब, प. उत्तर प्रदेश आदि में कृषि का व्यवसाय पूरी तरह से मंडियों और न्यूनतम समर्थन मूल्य पर होने वाली सरकारी खरीद प्रणाली पर ही निर्भर है। यह व्यवस्था इन प्रदेशों के लिए ''लाइफ लाईन" जैसी है। इन इलाकों में मंडी के लिए अतिरिक्त उत्पादन छोटे–छोटे किसानों और जमीन ठेके पर लेकर खेती करने वाले भूमिहीन काश्तकारों के यहां भी होता है। इसलिए कानूनों का निरस्त होना और न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी इनके लिए जीने मरने का सवाल है। वैसे भी पंजाब में किसान आंदोलनों की विरासत पहले से ही बहुत समृद्ध रही है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान पंजाब प्रदेश पूरे मुल्क में अगुवा प्रदेशों में रहा और किसानों

के संघर्ष इनमें प्रमुख तौर पर इतिहास में दर्ज हैं चाहे वह 1907 का पगड़ी संभाल आंदोलन रहा हो जिसका नेतृत्व शहीद भगत सिंह के चाचा सरदार अजीत सिंह ने किया अथवा वह 1913 के गदर आंदोलन के रूप में रहा हो या वह आजादी के बाद मुजारा लहर रही हो।

आंदोलन की पृष्ठभूमि : हाल के किसान आंदोलन की एक निश्चित पृष्ठभूति है। मोदी सरकार की अंधाधुंध थोपी गई कार्पोरेटपरस्त नीतियों के प्रतिरोध में संघर्षों के माध्यम से निर्मित हुए संयुक्त मंचों के बनने का एक दौर रहा। इसी का परिणाम था कि 2014 में मोदी सरकार के गठन के बाद जिस प्रकार भूमि अधिग्रहण कानून–2013 के जनपक्षीय प्रावधानों को हटाकर 2015 में लाए गए कार्पोरेट प्रस्त प्रावधानों के खिलाफ आंदोलन खड़ा हुआ था। इस आंदोलन की सबसे बड़ी खासियत यह थी कि इसने भूमि अधिग्रहण कानून–2015 को निरस्त करवाकर मोदी सरकार को पहला बड़ा झटका दिया था।

किसान सभा की पहलः इसके अगले चरण में कर्जा मुक्ति और न्यूनतम समर्थन मूल्य के सवालों को लेकर भूमि अधिकार आंदोलन और अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति के नाम से बड़ा मंच अस्तित्व में आया जिसमें 200 से अधिक किसान संगठन जुड़े। इसके गठन में अखिल भारतीय किसान सभा की निर्णायक भूमिका थी जिसके नेतृत्व में महाराष्ट्र और राजस्थान में बड़ी लामबंदियां किसानों की हो चुकी थी। हिसार में सम्पन्न हुए 34 वें राष्ट्रीय सम्मेलन में जो कार्यनीति केन्द्रीय नारे के तौर पर निकली वह थी ''न्यूनतम सहमति के मुद्दों पर व्यापक एकता बनाकर साझे संघर्ष करो" बाद के घटनाक्रम और उनमें किसान सभा की पहलकदमी ने हिसार राष्ट्रीय सम्मेलन के आह्वान की वैधता की पुष्टी की है। वर्तमान किसान आंदोलन को उपरोक्त पृष्ठभूमि में हुए किसान आंदोलनों से जोड़कर देखना होगा। ये उन संयुक्त आंदोलनों का अनिवार्य विस्तार यानि निरंतरता है। इन आंदोलनों की जड़ें कृषि संकट से उपजे और इकट्ठे हुए व्यापक असंतोष में हैं जो कि मुख्य रूप से कई दशकों की नवउदारीकरण की नीतियों का नतीजा है। खुद सरकार मानती रही है कि कर्जे के जाल में फंसे चार लाख से अधिक किसानों को आत्महत्याएं करनी पड़ी। देश में पिछले 45 सालों की सबसे भयंकर बेरोजगारी भी व्यवस्था की विफलता का एक बड़ा लक्षण है।

सत्ता का वर्ग चरित्र बेनक़ाब : उल्लेखनीय है कि मोदी के सत्ता में आने के बाद ताबड़तोड़ ढ़ंग से इन दिवालिया नीतियों को इस प्रकार थोपा गया कि कार्पोरेट कम्पनियों के हितों के लिए जनता के हितों को पूरी तरह से तिलांजलि देने में मोदी सरकार और कार्पोरेट का नापाक गठजोड़ बेशर्मी की तमाम हदें पार कर गया। एक तरह से संविधान में जनकल्याणकारी राज्य की अवधारणा का दिखावा मात्र भी नहीं छोड़ा।यही कारण है कि आम लोगों में शासन का वर्गीय चरित्र जितना इस आंदोलन के दौरान बेनक़ाब हुआ उतना पहले कभी नहीं हुआ था।

अपने देश के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को बेचना, रोजगार प्रदान करने वाले सभी विभागों का अंधाधुंध निजीकरण कर डालना और ऐसा करते हुए भ्रष्टाचार को सरेआम संस्थागत रूप दे दिया गया। कृषि क्षेत्र में बीज, दवाई, खाद आदि के मामले में पहले ही कार्पोरेट का व्यापक प्रवेश हो चुका था। लेकिन तीन कृषि कानूनों को लाकर कृषि उत्पादों के व्यापार, भंडारण और खरीद–फरोख्त भी इन कानूनों के द्वारा पूरे तौर पर अडानी–अम्बानी जैसों को सौंपने का रास्ता बनाने का काम किया है। दशकों से चल रहीं अनाज मंडियों की प्रणाली को चौपट करके राज्यों के अधिकार क्षेत्र पर भी हमला किया गया है क्योंकि कृषि क्षेत्र राज्यों के विषय की सूचि में आता है।

मोदी सरकार ताक में थी : ''आपदा को अवसर" में बदलने के लुभावने नारे की आड़ में तीन कानूनों कोरोना महामारी को भी भुनाने में संकोच नहीं किया और आनन–फानन में संसद की गरिमा को पलीता लगाते हुए फर्जीवाड़े से कानूनों पर ठप्पा लगवा लिया गया। यही धक्काशाही 44 श्रम कानूनों को खत्म करके केवल चार लेबर कोड बनाने के मामले में किया गया दोनों ही मामलों में एक समानता यह है कि किसान व मजदूरों पर किए गए दोनों हमले कार्पोरेट वर्गों के कहने से किए गए।

भाजपा की सरकारें आर.एस.एस. से ही निर्देशित होती हैं। 2019 के लोकसभा चुनावों में भाजपा ने अंधराष्ट्रवाद का वातावरण पैदा करके और कार्पोरेट द्वारा दिए गए असीमित धन के बल पर भारी बहुमत जुटा लिया।

इसलिए भाजपा को अपना एजेंडा थोपने का इससे बेहतर कोई अवसर नहीं मिल सकता था।

भाजपा–संघ के एजेंडा में लोकतंत्र, संविधान, धर्मनिरपेक्षता कहीं नहीं हैं।ये आजादी के आंदोलन में साम्राज्यवाद के साथ थे और आज भी हैं। इनको जनता का आपसी सद्भाव सबसे ज्यादा खटकता है। वे जाति व साम्प्रदायिक का ज़हर फैलाकर लोगों को बांट कर रखने की नीति पर चलते हैं। देश में लोकतांत्रिक व संवैधानिक संस्थाओं को सत्ताधारी भाजपा सुनियोजित साजिश के तहत ध्वस्त

करती जा रही है।

आंदोलन विरोधी साजिशें विफल : इस दौर में लोकतंत्र की जगह निरंकुश शासन पद्धति, साम्प्रदायिक व जाति की फूट डालने की कूटनीति और राजनीति में भ्रष्टाचार को संस्थागत रूप देना असल में तो इस सरकार के अंतर्गत चल रहे नवउदारीकरण के पैकेज के ही अनिवार्य अंग हैं। इसलिए यह किसान आंदोलन न केवल कृषि को बचाने बल्कि संविधान, लोकतंत्र और रोजगार बचाने यानि देश को बचाने का आंदोलन है। आंदोलन ने भाजपा–संघ की उन तमाम तिकड़मों और साजिशों का न केवल मुकाबला किया बल्कि उन्हें विफल भी किया। खालिस्तान, पाकिस्तान, हरियाणा–पंजाब पानी विवाद, स्थानीय लोगों के विरोध की आड़ में संघ गिरोहों द्वारा पुलिस के संरक्षण में हमले करवाने से लेकर आंदोलन को राजनीति से प्रेरित बताकर बदनाम करने की तिकड़में भी विफल रही। खासतौर पर 26 जनवरी की शांतिपूर्ण गणतंत्र टरैक्टर यात्रा के दौरान बड़ी हिंसा बरपाने की गहरी साजिश इस खतरनाक साजिश थी जोकि सफल नहीं हुई । क्योंकि मोदी सरकार को जो चीज सबसे ज्यादा खटक रही है, वह है इस आंदोलन का अनुशासन और शांति बनाए रखना। 26 जनवरी की घटना के बहाने 150 से ज्यादा आंदोलनकारियों की गिरफ्तारियां और गंभीर आपराधिक धाराएं लगाने की करतूतों का भंडाफोड़ हो चुका है। धारा 307 (हत्या की कोशिश) जैसे आरोपों को खारिज करते हुए अदालतों ने सभी आंदोलनकारियों को जमानतों पर छोड़ दिया।

आंदोलन का नेतृत्व : बहरहाल किसान आंदोलन के स्वरूप पर लौटते हुए हम पाते हैं कि इतने अधिक संगठनों से बना संयुक्त किसान मोर्चा जटिल परिस्थितियों में इस अभूतपूर्व आंदोलन का नेतृत्व करने में सफल हो पा रहा है तो इस स्थिति को कैसे देखा जाए? यह एक अहम सवाल है। सभी किसान संगठनों के परिप्रेक्ष्य में छोटे और बड़े अंतर हैं और यह एक स्वाभाविक बात भी है। क्या किसान नेताओं के व्यक्तिगत करिश्मे अथवा उनकी किसी चमत्कारिक ताकतों से आंदोलन चल रहा है? नहीं, यह आंदोलन असल में मुद्दों के आधार पर चल रहा है। किसानों को इस बात का ज्ञान है कि अगर तीन कानून लागू करने में यह सरकार कामयाब हो गई तो उनकी आजीविका चौपट होनी निश्चित है। मंडियां बंद हो जाएंगी और किसान बड़ी कम्पनियों को अपने उत्पादन बेचने पर मजबूर होंगे। फसलों के दामों का निर्धारण भी पूरी तरह कार्पोरेट के हाथों में चला जाएगा।

विस्तृत होता आधार : गैर कृषि वाले तबके भी यह अहसास करने लगे हैं कि अगर सरकारी खरीद और भंडारण नहीं होगा तो सार्वजनिक वितरण प्रणाली से सस्ती दरों पर उनको खाद्य सामग्री नहीं मिल पाएगी। इससे खाद्य सुरक्षा चौपट हो जाएगी और कुपोषण तथा भुखमरी का आलम पैदा होगा। कुपोषण के मामले में पहले ही दुनिया के 107 देशों में भारत के स्थान नीचे से 94 नंबर पर आता है। इसलिए खेत–मजदूर व उपभोक्ताओं के तौर पर दूसरे तबकों को भी इस आंदोलन से अपने को जोडना होगा।

तीनों कानूनों के असली मकसद को समझना कोई मुश्किल बात नहीं है। देशभर में अन्न भंडारण के लिए निजी कम्पनियों द्वारा ''साईलोज" (विशाल भंडार) स्थापित करने

के वास्ते सैंकड़ों स्थानों पर भूमि अधिग्रहण करके कानून बनने से पहले ही निर्माण कार्य शुरू हो चुके। रेल लाईन बिछ रही हैं। भारतीय खाद्य निगम (एफ.सी.आई.) इन गोदामों में भंडारण के लिए अडानी व अन्य कम्पनियों को अभी से ऊंची दरों पर किरायों की अदायगी शुरू कर चुका है। एफ.सी. आई. को दिवालिया स्थिति में लाने के पीछे यह व्यूह रचना पहले से ही गढ़ी जा रही थी।

जनतंत्र की रक्षा : जिस तरह लोकतांत्रिक ढ़ांचे को तहस नहस करने की मुहीम चल रही है उसे देखते हुए देशभर की जनतांत्रिक ताकतें इस आंदोलन के साथ जुड़ी हैं इनमें बुद्धीजीवी, लेखक, फिल्ममेकर, गायक, रंगकर्मी, सामाजिक आंदोलन शामिल है। कमोवेश जो स्थिति निर्मित हुई है, वह यह है कि न केवल तीन कानून बल्कि व्यवहार में इस आंदोलन ने मोदी शासन की निरंकुश शासन पद्धति को भी चुनौती दी है। इस प्रकार यह आंदोलन अपनी तरह से किसान आंदोलन मोदी सरकार के कार्पोरेट एजेंडा को ही चुनौती देते हुए एक बड़ा और वाजिब सवाल खड़ा कर रहा है कि सरकार जिस रास्ते पर देश को ले जा रही है क्या उसे ऐसा करने दिया जाएगा? इस प्रकार यह समूची नीतिगत व्यवस्था को ही चुनौती दे रहा है। ठीक इसी वजह से मोदी सरकार 18 महीने तक तीन कानूनों को निलंबित करने के लिए विवश होते हुए भी उन्हें निरस्त न करने पर अड़ी हुई हैं।

निर्णय लेने में सामूहिकता : बहरहाल किसान आंदोलन के नेतृत्व ने सरकार के साथ बातचीत को लगातार जारी रखा और साथ में ही आंदोलन की ताकत का विस्तार करने की जो कार्यनीति अपनाई वह इस आंदोलन की शक्ति का एक निश्चित स्रोत है। यदि इतनी संख्या के किसान नेता एकता बनाए रखने में कामयाब हैं तो यह सर्वसम्मत निर्णय लेने के कारण ही संभव हो पा रहा है।

किसान मजदूर एकता की मिसालः इस आंदोलन ने देश के मजदूर वर्ग को शुरू से ही अपने साथ लिया। यह रेखांकित करना यहां जरूरी है कि 26 नवंबर को देश की प्रमुख ट्रेड यूनियनों ने राष्ट्रीय हड़ताल की थी जोकि किसानों को बॉर्डरों पर रोके जाने का पहला दिन था। यह वर्गीय एकजुटता की एक शानदार मिसाल है। इसके पश्चात "भारत बंद" व अन्य आयोजनों में किसान–मजदूर एकता मजबूत हुई है।

संयुक्त किसान मोर्चा के आह्वानों का महत्व : इन चार महीनों के दौरान नेतृत्व की ओर से जो राष्ट्रीय स्तर के आह्वान किए गए उनमें 18 जनवरी के किसान महिला दिवस का विशेष तौर पर उल्लेख होना चाहिए। महिलाएं कृषि व पशुपालन के काम का बड़ा हिस्सा हमेशा से करती रही हैं। वे आंदोलन में भी भाग लेती रही। लेकिन 18 जनवरी व 8 मार्च के दिन महिलाएं जितनी संख्या में उमड़कर आई, उसके बाद स्थिति में एक बड़ा सकारात्मक बदलाव आया है। अब उनकी स्वतंत्र भागेदारी बढ़ी है परंतु विभिन्न स्तरों पर उन्हें निर्णय लेने व योजना बनाने वाली कमेटियों में प्रयाप्त जगह चाहिए। विशेष बात यह है कि इनमें युवा महिलाएं कार्यकर्ताओं के तौर पर भी सामने आई हैं। आंदोलन ने पितृसत्ता और जातिवाद को भी कमजोर किया है। पंजाब–हरियाणा के लोगों की बीच जो दूरिया पैदा की गई थी इस आंदोलन ने उस दूरियों को भी मिटाया और परस्पर सद्भाव को बहाल किया है। दरअसल जनांदोलन का रूप धारण करने वाले आंदोलन सामाजिक जड़ता को तोड़कर सामुदायिक पहलकदमियों के नए रास्तों को खोलते हैं। इस सामाजिक प्रक्रिया को धरातल पर देखा जा सकता है। इस आंदोलन के लिए समर्थन और हमदर्दी की कोई सीमा नहीं है। लेकिन इससे यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि गैर काश्तकार तबकों को आंदोलन के साथ जोडऩे की जरूरत नहीं है। देहात में गैर काश्तकार तबकों को जोडऩे के लिए विशेष प्रयत्नों की दरकार है। इनमें खासतौर पर वो समुदाय हैं जो खाद्य आपूर्ति के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर निर्भर हैं। रोजगार के लिए भी इनके हिस्से भी कृषि पर निर्भर है। इस निर्भरता के बावजूद भाजपा की यह चेष्ठा है कि जातिगत ध्रूवीकरण करके इन्हें आंदोलन से दूर रखा जाए।

ऐतिहासिक दिनों का महत्व : आंदोलन के दौरान इतिहास के विशेष दिनों को मनाने का खास महत्व रहा है। जैसे गणतंत्र दिवस, पगड़ी संभाल दिवस, चौ. छोटूराम, संत रविदासजी, स्वामी सहजानंद सरस्वती की जयंतियां, मुजारा लहर दिवस आदि। इनमें भी 23 मार्च का भगत सिंह, राजगुरू और सुखदेव का शहीदी दिवस विशेष रूप से अपनी गहरी छाप छोड़ गया। इस संदर्भ में यह रेखांकित होना जरूरी है कि ऐतिहासिक दिनों को मनाना केवल मात्र रस्म अदायगी नहीं थे। इनका केवल प्रतिकात्मक महत्व नहीं था। असल में उपनिवेशवाद, सामंतवाद, पूंजीवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्षों के शानदार विरासत आज के दौर के साथ जोडऩा जरूरी है। जरूरी इसलिए है कि वे मूल्य और आदर्श आज के हालात में और भी अधिक प्रासंगिक बने हुए हैं। इस वजह से स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान और उसके बाद के ऐतिहासिक आंदोलनों के महानायक और

आम लोगों द्वारा अदा की गई अभूतपूर्व भूमिका हमारी ताकत का एक ऐसा श्रोत है जिसकी पहरेदारी और संवर्धन उसके वारिसों की नैतिक जिम्मेदारी बनती है। इसलिए साम्राज्यवाद विरोध, मेहनतकश की मुक्ति और सामाजिक न्याय के लिए अतीत में लड़ी गई लड़ाई के सूत्रों को आज की लड़ाई से जोड़के आगे बढ़ना होगा। ये आंदोलन की ताकत के श्रोत हैं।

सफल किसान मजदूर पदयात्राएं : इस बीच किसान सभा की पहलकदमी पर आयोजक की गई किसान–मजदूर पदयात्राओं ने भी किसान आंदोलन को निश्चित तौर पर बल प्रदान किया है। हांसी की ऐतिहासिक लाल सड़क से 18 मार्च को लाल व तिरंगे झंडों के बीच इंकलाब जिंदाबाद और 1857 के शहीद जिंदाबाद के नारों के बीच किसान सभा, खेतमजदूर यूनियन और सीटू के नेताओं की उपस्थिति में शहीद भगत सिंह की भानजी गुरजीत कौर व डा. अशोक ढ़ावले द्वारा शहीद यादगार पदयात्रा को झंडा दिखाकर रवाना करना अपने आपमें शहीदों की विरासत को जीवंतता प्रदान करने से कम नहीं था। खटकड़ कंला से चली पंजाब किसान सभा की यात्रा पानीपत में हरियाणा के साथ मिलकर गुरजीत कौर जी व कृष्ण प्रसाद द्वारा रवाना की गई. यह पदयात्रा 23 मार्च को सिंघु बॉर्डर पर पहुंची। इसी प्रकार मथुरा से पलवल की पदयात्रा ने भी पूरे रास्ते पर शहीदों का संदेश किसान आंदोलन से जोड़ा।

इन पदयात्राओं का शहर–गांवों में फूलों की बारिश करके गर्मजोशी से स्वागत हुआ और लोगों ने स्वागत समितियां बनाकर ठहरने–खाने आदि की व्यवस्था की। एक गांव के लोग अगले गांव तक जत्थों के साथ गए। पदयात्राओं में 12 साल के स्कूली बच्चे से लेकर 82 साल की महिला भी थी। विकलांग मंच के साथी भी थे। जेल से छुटकर आए युवक भी थे। जेलों से छुटे युवाओं और शहीद किसानों के परिजनों को भी पदयात्रा के दौरान सम्मानित किया गया। विभिन्न किसान संगठनों के नेतृत्व ने रास्तों पर पहुंचकर पदयात्राओं का स्वागत किया। इन यात्राओं ने न केवल किसान–मजदूर की एकता का संदेश लाखों लोगों तक भेजा बल्कि 23 मार्च को सभी बॉर्डरों पर शहीद दिवस आयोजनों में लाल, तिरंगे, और अन्य रंगों के झंडों से बहुरंगी छटा बिखरने का काम भी किया। कुल मिलाकर लगभग बीस हजार लोगों को इन यात्राओं ने अपने रास्तों पर संबोधित किया।

भारत बंद का आयोजन : 26 मार्च का भारत बंद अपने आपमें एक ऐसी परिघटना के रूप में दर्ज हुआ है जिसने इस आंदोलन को नई बुलंदियां परवान चढ़ाई हैं। इसकी अभूतपूर्व सफलता ने भाजपा सरकारों के इस मिथ्या प्रचार को एक बार फिर धराशाही कर दिया कि यह दो–तीन प्रदेशों का ही आंदोलन है। देश के भिन्न–भिन्न भागों में चल रही विशाल किसान महापंचायतें अपने आपमें आंदोलन का विस्तार सुनिश्चित करवाने के प्रबल संकेत के तौर पर देखी जा सकती हैं।

संयुक्त किसान मोर्चा की अगुवाई में 5 अप्रैल को एफ. सी.आई. कार्यालयों के घेराव, 13 अप्रैल को जलियांवाला बाग की बरसी, 14 अप्रैल को बाबा साहेब आंबेडकर की जयंति और मई दिवस जैसे कई ऐतिहासिक अवसरों पर जुटने वाली संकल्पित किसान–मजदूर लामबंदियों के सामने मोदी सरकार का अहंकार मुश्किल ही टिक पाएगा।

वैकल्पिक नीतिय चाहिएं : आखिर में एक सवाल यह कि तीन कृषि कानून, न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी और बिजल बिल संशोधन 2020 की वापसी जैसी मुख्य मांगों को स्वीकार किये जाने से क्या कृषि संकट हल हो जाएगा? नहीं। इससे आंदोलन के इस चरण का समापन होगा। परंतु शासक वर्गों की मौजूदा नीतियों के स्थान पर जब तक वैकल्पिक नीतियां नहीं लाई जाएंगी तब तक किसान– मजदूरों की दशा और कृषि की बिगड़ रही दशा में सुधार संभव नहीं है। अंधाधुंध नव– उदारीकरण की जनविरोधी नीतियों में बदलाव के लिए किसानों और अन्य तबकों के स्वतंत्र और संयुक्त आंदोलनों का जारी रहना निश्चित है।

संघर्ष की नयी भाषा और व्याकरण गढ़ते किसान आन्दोलन की मौलिक विशेषताएँ

–बादल सरोज

इन पंक्तियों के लिखे जाने के समय 133 दिन हो हैं और आज भी करीब ढाई से तीन लाख किसान सिंघू, टिकरी, गाजीपुर, पलवल की दिल्ली की बॉर्डर्स को घेरे बैठे हैं। ये किसान बड़ी तादाद में पंजाब से आये हैं। हरियाणा की तादाद भी कम नहीं है। गाजीपुर की सीमा पर पश्चिमी उत्तरप्रदेश के किसानो ने मोर्चा संभाला हुआ है तो पलवल की सीमा पर हरियाणा के किसान डटे हुए हैं। उनका साथ देने आगरा, मथुरा और इटावा आदि जिलों के किसानो के जत्थे तथा मध्यप्रदेश के ग्वालियर और चम्बल से के किसान आते जाते रहे हैं। जयपुर से दिल्ली को जोड़ने वाली सीमा शाहजहाँपुर बॉर्डर पर भी किसानो का डेरा डले हुए 100 दिन पूरे हो गए हैं। मेवात की सुनेहरा पर लगी किसानो की छःठी बॉर्डर भी कमजोर नहीं है। इतने दिन गुजर जाने और सरकार की तरफ से बातचीत पूरी तरह बंद किये जाने के बावजूद जैसे जैसे दिन बढ़ते जा रहे हैं किसानो और उनके साथ एकजुटता प्रदर्शित करने वालों की संख्या बजाय घटने के लगातार बढ़ती जा रही है। प्रधानमंत्री से लेकर सारे कारपोरेट मीडिया, आईटी सैल के छुटभैय्ये से लेकर बाजार मोहल्ले में अपनी असली पझचान छुपाकर बैठे संघी भाई जी और सरकारी अमले के झूठे प्रचार में युद्ध स्तर पर झोंके जाने के बावजूद देश का विराट बहुमत किसान के साथ खड़ा है यह 8 दिसम्बर और 26 मार्च कामयाब भारत बंद से जाहिर हो चुका है और कई बार के सड़क रेल रोको के सफल आंदोलनों से साबित हो चुका है।

इस आन्दोलन के प्रबंधन के बारे में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। जैसे यह कि इसमें शामिल किसान अचानक गुस्से में उठकर नहीं आये हैं। पूरी तैयारी से आये हैं। उनके साथ ढाँक कर घर जैसा बनायी गयी ट्रैक्टर्स–ट्रॉली, ट्रक और लोडिंग वाहन हैं, उनमे बिछे रजाई–गद्दे हैं, आटा–दाल–चावल–चीनी की बोरियां हैं। किसी किसी ट्रॉली में सब्जियां भरी हैं। रसोई गैस है– सैकड़ों लोगों का खाना पकाने लायक बड़ी बड़ी देगें हैं, पचासों रोटियां एक साथ सेंकने वाले बड़े तवे हैं। हर गाँव की एक ट्रॉली सिर्फ लकड़ियों से भरी है जिनका इस्तेमाल खाना पकाने के साथ रात की ठण्ड भगाने के लिए अलाव सुलगाने के काम में भी किया जा रहा है। मगर अब इस सबकी जरूरत उन्हें नहीं पड़ रही। उनके खाने पीने का जिम्मा जहां उनका डेरा है उसके आसपास के गाँवों और अनेक नागरिक संगठनो, गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटियों ने इतनी मुस्तैदी के साथ संभाला हुआ है कि हाईवे पर कोई 15 से 20 किलोमीटर की दूरी तक लगी ट्रैक्टर–ट्रक–ट्रॉली की लाइन के समानांतर लंगर और खाने के स्टॉल्स की भी लाइन लगी हुयी है। जिनमे दवा है, डॉक्टर्स हैं, ताजे खाने के सभी संभव प्रकार हैं, चाय से लेकर ताजे गन्ने के रस, पानी की बॉटल्स और स्नैक्स आग्रह पूर्वक देते बांटते युवा हैं । इन्हें किसी ने नहीं बुलाया । ये खुद आये हैं अपने संसाधनों से आन्दोलनकारियों के खाने पीने रहने और सेहत की जरूरतों का ख्याल रखने । अब गर्मियां आ गयी हैं तो घासफूस के घर और कूलर्स भी छहों बॉर्डर्स पर पहुँचने लगे हैं।

वे आसानी से नहीं आ गए। रास्ते में खड़े किये गए बैरीकेड्स फांदते, सरकार द्वारा खोदी गयी खंदकों को लाँघते, आंसू गैस, पानी फेंकने वाली तोपों की बौछार से भीगते, लाठियां खाते, जेल जाते हुए दिल्ली की सीमाओं पर पहुंचे हैं। इस बीच उन्हें देशद्रोही करार दिया गया, 6 हजार रूपये सालाना किसान निधि की वजह से आलसी और परजीवी हो जाना बताया गया। विदेशी पैसे पाने और विपक्षी राजनीतिक दलों के भड़कावे में आने की तोहमतें लगाई गयी। मगर इन सबसे विचलित हुए बिना वे पूरी हिम्मत से दिल्ली पहुँच गए और बॉर्डर ओर जहाँ रोक दिया गया वहां जमकर बैठ गए।

क्यों है यह इतिहास का असाधारण संग्राम

दिल्ली की बॉर्डर्स पर अपने ही देश की राजधानी में दाखिल होने से रोक दिए गए किसानो की यह लड़ाई अपनी भागीदारी की विशालता और कमाल के जनसहयोग और समर्थन के हिसाब से भारत के जनांदोलनों के इतिहास का एक असाधारण संग्राम ही नहीं है, संघर्षो की नयी भाषा और व्याकरण भी गढ़ रही है। मगर सिर्फ इतना भर कहना काफी नहीं होगा। इसकी और भी ऐसी अनेक खासियतें हैं जिनकी वजह से खुद को भक्तों का ब्रह्मा मानने वाले मोदी, विभाजनकारी गिरोह आरएसएस और उनके सरपरस्त कारपोरेटों की नींद उड़ी हुयी है।

इनमे से एक है इस भागीदारी का करीब एक तिहाई महिलाओं का होना। वे सिर्फ भीड़ की तादाद नहीं बढ़ा रही – सभाओं में बोलने, नारे लगाने, बीच बीच में जलूस निकालने और अनुशासन बनाये रखने के कामो में भी बढ़चढ़ कर हिस्सेदारी कर रही हैं। इसी तरह की एक और विशेषता है इसमें युवक युवतियों की हिस्सेदारी। इनमे रोजगार न मिलने के चलते खेती किसानी करने वाले युवाओं से लेकर कालेज, यूनिवर्सिटी और आईआईटीज में पढ़ने वाले विद्यार्थी हैं। यही स्थिति इस आंदोलन से एकजुटता प्रदर्शित करने वालो की है। श्रमिक कर्मचारी संगठन मेडिकल सहायता के कैम्प्स लगाए हुए हैं तो न जाने कितने ऐसे हैं जो बिना किसी के कहे ही पूरे परिसर की, सडकों की साफ़ सफाई करने में जुटे हैं। अनेकों ने अपने घर और होटल इनके नित्यकर्मों और नहाने धोने के लिए खोल रखे हैं। कुछ छोटे कारखानों ने अपने कैंपस भी उपलब्ध करा दिए हैं। देश की ट्रेड यूनियन्स किसान आंदोलन के साथ कदम से कदम मिला रही हैं।

इसकी बुनियादी और दूरगामी छाप छोड़ने विशेषतायें

असली मायने में इस असाधारण किसान आन्दोलन की इन सबसे भी कहीं ज्यादा बुनियादी और दूरगामी छाप छोड़ने वाली विशेषतायें चार हैं।

पहली है इस लड़ाई का नीतिगत सवालों पर पूरी तरह से स्पष्ट होना। आम किसान से लेकर नेताओं तक हरेक की जुबान पर एक ही बात है ; खरीद में कारपोरेट, ठेका खेती और जमाखोरी कालाबाजारी वाले तीनो कृषि कानूनों और बिजली संबंधी प्रस्तावित क़ानून की पूरी तरह से वापसी। उनकी पक्की राय है कि ये सिर्फ किसानो का नहीं भारत की जनता का सर्वनाश करने वाले क़ानून हैं और चूँकि जिंदगी और मौत के बीच कोई बीच का रास्ता नहीं होता इसलिए इनकी वापसी के अलावा कोई बीच का रास्ता नहीं है। इसके साथ उनकी मांग है न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) को स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों के आधार पर निर्धारित करना और उसे कानूनी दर्जा देकर उससे कम पर खरीदना दंडनीय अपराध बनाना। इन मांगो पर उनकी जानकारियां एकदम अपडेटेड हैं जिन्हे वे गजब की सरलता से बताते भी हैं।

दूसरी यह कि वे असली गुनहगारों को भी भलीभाँति पहचानते हैं इसलिए उनके आंदोलन के निशानों में अडानी के शोरूम और अम्बानी के पेट्रोल पम्प और संस्थान भी शुरू से शामिल हैं। दिल्ली चलो में भी वे कारपोरेट नियंत्रित मोदी के गोदी मीडिया से बात तक नहीं कर रहे हैं। उसे अपने घेराव के डेरों में आने नहीं दे रहे हैं। हर आव्हान में देश भर में एक डेढ़ लाख से ज्यादा जगहों पर इस तिकड़ी – मोदी, अडानी, अम्बानी – के पुतले फूंके गए। आठ दिसम्बर और 26 मार्च के भारत बंद में भी यही निशाने पर रहे।

तीसरी असाधारणता है हुक्मरान भाजपा–आरएसएस जिसे अपना ब्रह्मास्त्र मानती है उस धर्माधारित साम्प्रदायिक विभाजन के मामले में पूरी तरह स्पष्ट होना। छहों सीमाओं पर और उनके समर्थन में देश भर में चलने वाली सभाओं में तकरीबन हर वक्ता किसानो की मुश्किलों और इन तीन

चार कानूनों पर अपनी बात कहने के साथ ही भाजपा और मोदी के विभाजनकारी एजेंडे का पर्दाफ़ाश जरूर करता है। उसे समझने की जरूरत पर जोर देता है और सभी धर्मों को मानने वालों से इस साजिश को समझने की अपील करता है। सिर्फ कहने में ही नहीं बरतने में भी यही सदभाव और सौहार्द्र नजर आता है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख मिलकर लंगर चलाते हुए साफ़ नजर आते हैं। इस तरह यह संघर्ष बिना किसी सैद्धांतिक सूत्रीकरण में जाए ही साम्प्रदायिकता के जहर के उतार की दवाई भी दे रहा है और बिना किसी अतिरंजना के कहा जा सकता है कि आज के समय में यह एक बड़ी बात है।

चौथी और सबसे नुमाया खूबी है इसकी जबरदस्त चट्टानी एकता। मंदसौर गोलीकाण्ड के बाद से लगातार संघर्षरत करीब ढाई सौ संगठनो वाली अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति (एआईकेएससीसी) इसकी धुरी है। पंजाब, हरियाणा और उत्तरप्रदेश की अलग अलग किसान यूनियने और राष्ट्रीय किसान महासंघ इसके साझे मोर्चे में हैं। अलग अलग विचारधाराओं और नेताओं के आग्रहों के बावजूद इस लड़ाई के मामले में एकजुटता में ज़रा सी भी कसर नहीं है। यह एकता रातोंरात नहीं बनी। इसके पीछे जहां कृषि संकट की भयावहता और कार्पोरेटी हिन्दुत्व वाली सरकार की निर्लज्ज नीतियों को तेजी से लागू करने की हठधर्मिता से उपजी वस्तुगत (ऑब्जेक्टिव) परिस्थितियाँ हैं तो वहीं इनके खिलाफ आक्रोश को आकार देने के लिए, सबको जोड़ने की अखिल भारतीय किसान सभा और उसकी ओर से उसके महासचिव हन्नान मोल्ला द्वारा धीरज के साथ की गयी कोशिशें हैं और नाशिक से मुम्बई तक किसान सभा के पैदल मार्च और राजस्थान के किसान आन्दोलन से बना असर भी हैं।

यही एकता थी इस आंदोलन के मंच – संयुक्त किसान मोर्चा – के किये आव्हानो के साथ हो रही लामबंदी के रूप में दिखता है। मेहनतकश संगठनों की बात अलग भी रख दें तो हाल के दौर में यह पहला मौक़ा था जब 24 विपक्षी दल इकठ्ठा होकर भारत बंद के समर्थन में उतरे। एनडीए में शामिल कई दल भी किसानो के पक्ष में बोलने के लिए मजबूर हुए।

भाजपा के छल, छद्म और पाखण्ड के विरुद्ध डटा भारत

इस आंदोलन ने भाजपा के ब्रह्मास्त्र आईटी सैल और पाले पोसे कारपोरेट मीडिया के जरिये किये जाने वाले दुष्प्रचार और उसके जरिये उगाई जाने वाली नफरती चिंटुओं की खरपतवार की जड़ों में भी, काफी हद तक, मट्ठा डाला है।

भारतीय जनता पार्टी और उसके रिमोट का कंट्रोलधारी आरएसएस और कारपोरेट के गठबंधन वाले मौजूदा निजाम की दो जानी पहचानी धूर्तताये हैं। एक तो यह कि इसने बड़ी तादाद में भारत में रहने वाले मनुष्यों को उनके प्रेम, स्नेह, संवेदना और जिज्ञासा तथा प्रश्नाकुलता के स्वाभाविक मानवीय गुणो से वंचित कर दिया है। उन्हें नफरती चिंटू में तब्दील करके रख दिया है। देश के किसानो के ऐतिहासिक आंदोलन को लेकर संघी आईटी सैल के जरिये अपने ही देश के किसानो के खिलाफ इनका जहरीला कुत्सा अभियान इसी की मिसाल है। इस झूठे प्रचार को ताबड़तोड़ शेयर और फॉरवर्ड करने वाले व्हाट्सप्प यूनिवर्सिटी से दीक्षित जो श्रृगाल–वृन्द है इसे अडानी–अम्बानी या अमरीकी कम्पनियां धेला भर भी नहीं देती । इनमे से ज्यादातर को तीनो कृषि क़ानून तो दूर क से किसान और ख से खेती भी नहीं पता। इनमे से दो तिहाई से ज्यादा ऐसे हैं जिनकी नौकरियाँ खाई जा चुकी हैं, आमदनी घट चुकी है और घर में रोजगार के इन्तजार में मोबाइल पर सन्नद्ध आईटी सैल के मेसेजेस को फॉरवर्ड और कट–पेस्ट करते जवान बेटे और बेटियां हैं फिर भी ये किसानो के खिलाफ अल्लम–गल्लम बोले जा रहे हैं। क्यों?

इसके पीछे कारपोरेट की काबिलियत और आरएसएस की मेहनत है। इन दोनों ने मिलकर इन्हे और समाज के एक हिस्से को पर्याप्त खूँखार और आत्मघाती बना दिया है। कल को अगर देश के पिज़्ज़ा पीसेज बनाकर सेल लगाई जाएगी तब भी ये उसकी हिमायत करते दिखेंगे (इनमे से कुछ इन दिनों एक और विभाजन की बात करने भी लगे हैं)। इनकी नफरत मुसलमानों भर के खिलाफ नहीं है। स्कूल कालेज के बच्चों के खिलाफ है, पढ़े लिखे लोगों के खिलाफ है, मजदूर के खिलाफ है, किसान के खिलाफ है, दलित के खिलाफ है, आदिवासी के खिलाफ है, ओबीसी हैं तो दूसरों के खिलाफ है, सवर्ण है तो दूसरे सवर्णो के भी खिलाफ है, महिला के खिलाफ तो पूरी तरह बजबजा ही रही है।

इन तर्क, तथ्य और असहमति भीरुओं की बुद्धिहीनता से आसक्ति इस कदर है कि ये सिर्फ अडानी, अम्बानी जैसे ठगों या मोदी, शाह जैसे उनके चाकरों के लिए ही नहीं भिड़ते ट्रम्प के लिए भी लड़ मरते हैं। इन्हे चौतरफा विफलतायें नजर नहीं आतीं। इन्हे अपने आराध्यों की कथनी और करनी में आकाश पाताल का अंतर समझ नहीं आता। इन्हे यह भी समझ नहीं आता कि ठीक जो बात दिल्ली से बोली जाती है उसकी एकदम उल्टी बात इन्ही के नेता भोपाल और हरियाणा से बोल रहे हैं रहे हैं। यह सिर्फ हास्यास्पद ही नहीं शरारत पूर्ण है। ऐसा करना जनता और देश ही नहीं

खुद अपने भक्तों के साथ भी छल, छद्म और पाखण्ड है। मगर भक्तों की प्रजाति में शामिल होने की मुख्य शर्त ही विवेक और तार्किकता को ताले में बंद करके रख देना।

इस गिरोह की दूसरी खूबी है दो जुबानो से एक साथ बोलना।

उधर मोदी–शाह देश भर के किसानो की मांगों को ठुकराते हुए कारपोरेट खरीदी की हिमायत में लगे हैं। कह रहे हैं कि इससे किसानो को अपनी फसल देश भर में कही भी बेचने का हक़ मिल जाएगा। अमृतसर का किसान अपने चावल अलेप्पी में और गोरखपुर का किसान अपना गेंहू चेन्नई में बेच सकेगा – इधर उन्ही की पार्टी के हरियाणा के मुख्यमंत्री खट्टर बोल रहे हैं कि राजस्थान का किसान अपना बाजरा हरियाणा बेचने आएगा तो उसके खिलाफ कार्यवाही होगी। मध्यप्रदेश वाले शिवराज सिंह तो उनसे भी दो जूते आगे निकल गए और बोले कि किसी और प्रदेश का किसान अपनी फसल मध्यप्रदेश बेचने आया तो उसकी गाड़ी जब्त करके जेल भेज दी जाएगी। यह दोमुंहापन अनायास नहीं है। इसे योजना बनाकर, सोचविचार कर किया जाता है। लोगो को गुमराह करने और उनके हर तबके को किसी न किसी बात से बहकाने की कला में भाजपा और संघ निर्लज्ज भी हैं पारंगत भी हैं। कारपोरेट नियंत्रित मीडिया के वर्चस्व के चलते इन बयानों की विवेचना और आलोचना पूरी तरह बंद होने से इनका छल, छद्म और पाखण्ड बिना किसी जाँच परख के चलता रहता है। मगर हमेशा ऐसा नहीं हो सकता।

किसान आंदोलन ने काफी हद तक इस उन्मादी और झूठे प्रचार की मारकता कम की है। उसने न सिर्फ इसके खंडन का काम किया है बल्कि अपने सन्देश और तर्कों को लेजाने वाले नए जरिये भी तैयार किये हैं। लोगों के बीच असलियत ले जाने , उन्हें उसके आधार पर संगठित और आंदोलित करने और झूठ के कुहासे को नारों की गूँज से उड़ा देने का वैकल्पिक तंत्र विकसित किया है । अपने नूतन तरीके निकाले हैं। हर वर्ग संघर्ष में शोषित लड़ाके अपने माध्यम ढूंढ़ ही लेते हैं। प्राचीनकाल में स्पार्टकस की अगुआई में हुए रोमन साम्राज्य के खिलाफ दासों के विद्रोह के समूचे इलाके में फ़ैल जाने के पीछे उनके सन्देश भेजने की मौलिकता थी। भारत में भी इसके अनेक उदाहरण हैं। जैसे 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम की खबर और उसमे हिस्सा लेने का आव्हान आननफानन पूरे देश में पहुँच जाना। इसके लिए आजादी के लड़ाकों ने कितना मौलिक और ठेठ देहाती तरीका अपनाया था। हर बगावती गाँव पांच रोटी बनाता था और उन पर नमक और गोश्त की डली रखकर अगले पांच गाँवों के लिए भेज देता था। उनमे से सहमत होने वाले गाँव फिर पांच रोटी बनाकर इसी प्रक्रिया को जारी रखते थे। अंग्रेजो की खुफिया फ़ौज और उसके चाटुकार सामंत समझ ही नहीं सके और रोटियों ने उनके तख़्त उछाल दिए। गरज यह कि जनता हुक्मरानो के मीडिया की मोहताज नहीं रहती – वह खुद अपने तरीके चुनती है।

इसलिए आत्ममुग्ध और आत्मरत कारपोरेटी–हिन्दुत्वियै कितने ही अपने स्वर्ग में बने रहें, इनके किये कुछ नहीं बनने वाला। इनके विरोध तथा गद्दारी के बावजूद देश ने आजादी हासिल कर ही ली थी। इनके माफियां मांगने के बावजूद जनता ने इमरजेंसी से मुक्ति पा ही ली थी। इनके विरोध के बावजूद बदलाव की ताकतें अपना रास्ता ढूंढ लेती हैं। किसान आंदोलन ने इस रास्ते की तलाश की है।

किसान आंदोलन की यही विशेषताएं हैं जो इस बात की आश्वस्ति देती हैं कि इतिहास रचा जा रहा है – इतिहास रचा जाएगा – और जो अहंकारी उसके खिलाफ साजिश रचेगा उसे इतिहास के कूड़ेदान के हवाले कर दिया जाएगा। □

भारतीय किसानों और खेती के विध्वंस के कानून

–डी पी सिंह

5 जून 2020 को मोदी सरकार ने राष्ट्रपति से अध्यादेश जारी कराया। तीन कृषि विधेयक लागू कर दिए। सितंबर के अंत में संसद में जनतंत्र का गला घोट कर ये कानून पारित करा दिये । राष्ट्रपति के हस्ताक्षर भी तुरंत करा लिए गए ।

इनमें पहला कानून है "कृषि उपज और व्यापार (संवर्धन और सरलीकरण) कानून 2020। दूसरा है "आवश्यक वस्तु (संशोधन) कानून 2020"। तीसरा है "कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) मूल्य आश्वासन और कृषि सेवा समझौता कानून 2020"।

जैसे ही इन कानूनों को अध्यादेश के जरिए लागू किया गया । वैसे ही पंजाब के किसान संगठनों के नेतृत्व में पंजाब के किसानों ने जबरदस्त आंदोलन छेड़ दिया। आज इन तीनों कानूनों को वापस लेने, बिजली विधेयक 2020 (जो अब 2021 हो चुका है)। वापस लेने, पराली जलाने की सजा और जुर्माने को खत्म करने आदि मांगों को लेकर किसान दिल्ली को चारों ओर से घेरे सड़कों पर हुए बैठे हैं। किसान आंदोलन जनांदोलन का रूप लेता जा रहा है। सरकार द्वारा आंदोलन को बदनाम करने और उस में फूट डालने की सारी कोशिशें नाकाम हो चुकी है। अब तक सरकार ने दमन के जितने भी तरीके अपनाएं हैं। वह भी आंदोलन को कमजोर नहीं कर पाए। बल्कि हर दमनकारी कदम के बाद आंदोलन और मजबूत होकर उभरा है।

पृष्ठभूमि

सोवियत संघ का विघटन हो चुका था। विश्व शक्ति संतुलन उन्हीं अंतर्राष्ट्रीय लुटेरों के पक्ष में बदल गया । जो समूची दुनिया के कच्चे माल से लेकर पक्के माल के मालिक बन रहे हैं। डंकल समझौते के जरिए विश्व व्यापार संगठन का गठन किया गया । जिस पर गरीब देशों की बांहें मरोड़ कर एक तरफा शर्तो पर अंगूठा लगवा लिए गए।

इससे पहले भारत में दो–दो प्रधानमंत्रियों की हत्या हुई। देश के सीमावर्ती राज्यों में उग्रवादी संगठन खड़े कर लिए गए।देश के अंदरूनी हिस्सों में मंदिर मस्जिद के नाम पर जबरदस्त मार काट शुरू करा दी गई। भारी अराजकता फैलाई गई। जल्दी–जल्दी चुनाव हुए लाशों पर चढ़कर जो पार्टी देश की गद्दी तक पहुंची, वास्तव में वह कोई पार्टी नहीं बल्कि वह सांप्रदायिक गिरोह है। जो आजादी के संघर्ष में अंग्रेजों का साथ दे रहा था। उधर दो– दो प्रधानमंत्रियों की हत्या के बाद देश की राजनीति में विदेशी कंपनियों के चेयरमैन और डायरेक्टर बड़ी संख्या में उतार दिये गए थे। ब्रटनवूड संस्थाओं के अधिकारी भारत मे शीर्ष राजनीतिक पदों तक पहुंच चुके थे।

अटल सरकार 6 वर्ष में देश के लगभग 13 सौ कानूनों को विश्व बैंक और विश्व व्यापार संगठन की शर्तों के अनुरूप बदल गई थी।जिसमें कृषि भूमि, कृषि व्यापार, मात्रात्मक प्रतिबंध, बिजली कानून आदि कानून भी शामिल थे। मनमोहन सरकार के 10 वर्षों में भी यही प्रक्रिया जारी रही। मोदी सरकार ने आते ही सुधारों के नाम पर समूची खेती को कारपोरेट के हवाले करने की तरफ तेजी से कदम बढ़ा दिया। ये तीनों कृषि कानून उसी का हिस्सा है। यद्यपि कोरोना की आपदा को अवसर में बदलने का काम मोदी सरकार ने सिर्फ खेती में ही नहीं किया। बल्कि लेबर कानूनों को बदलकर कॉर्पोरेट के लिए इंसान की औलाद को बैल की तरह कमाने को मजबूर कर दिया है। अंतरिक्ष, रक्षा उपकरण ,परमाणु ऊर्जा, एयर, स्पेस सहित समूचे सार्वजनिक क्षेत्र को कारपोरेट के हवाले करने के फैसले कर दिए हैं।

ताक पर संविधान, जनतंत्र और मानवता

- पहली बात तो यह है कि कृषि जिंसों का व्यापार और खेती हमारे संविधान की राज्य सूची में दर्ज है। उसे ठुकराते हुए मोदी की सरकार ने सीधे कानून बना दिए हैं। अफसोस : देश की सबसे बड़ी अदालत को भी इन कानूनों का यह कालापन दिखाई नहीं दे रहा है।
- दूसरे, कानून को संसद में पारित करते हुए जिस प्रकार जनतंत्र का मजाक बनाया गया है। यह सारी दुनिया ने देखा है। बहुमत के बुलडोजर से सदस्यों के जनतांत्रिक अधिकार भी रौंद डाले गए। भीड़ जैसे हो हल्ले के साथ कानून पारित करा दिये गए।
- तीसरे कोरोना की आपदा का दौर था लॉकडाउन की बंदिशों का कहर था इंसान की लाशें पॉलिथीन बैग में भरकर फेंकी जा रही थी ऐसे में राष्ट्रपति के अध्यादेश से कृषि कानूनों को लागू करने, और संसद में पारित कराने, राष्ट्रपति के हस्ताक्षर कराने की हड़बड़ी क्यों थी इसका जवाब इन कानूनों में ही मौजूद है।

कृषि उपज (व्यापार और वाणिज्य संवर्धन और सरलीकरण) कानून

अंग्रेजी शासन में कृषि जिंसों का व्यापार निजी कंपनियों के लिए ही पूरी तरह खुला हुआ था। जो आजादी के बाद तक भी जारी रहा। लेकिन ये निजी कंपनियां किसानों से फसलों को सस्ते में खरीद लेती थी। और अपने गोदामों में भर लेती थीं। फिर उपभोक्ताओं को बहुत महंगे रेट पर बेचती थी। कभी–कभी देश में बनावटी अकाल भी पैदा कर देती थी।

बाद में सरकार ने बड़ी कंपनियों यहां तक कि थोक व्यापारियों तक को कृषि जिंसों के व्यापार से बाहर कर दिया। इनके द्वारा किसानों से सीधे तौर पर कृषि उत्पाद खरीदने पर रोक लगा दी गई। हरित क्रांति के दौर में राज्यों के अधीन कृषि उपज मंडी समितियों का गठन किया गया। तय कर दिया गया कि किसान अपनी फसल को मंडी स्थलों पर लाएगा। वहां पर फसलों की बोली लगेगी। तभी फसल बिकेगी। इसके अलावा कोई कंपनी किसान से फसलों की सीधी खरीद फरोख्त नहीं कर सकती।

अब मोदी सरकार ने इस कानून के तहत फिर से देशी, विदेशी निजी कंपनियों को भारत में कृषि जिंसों की खरीद फरोख्त में छुट्टा छोड़ दिया है। इलेक्ट्रॉनिक मार्केटिंग प्लेटफॉर्म के जरिए ऑनलाइन खरीद–फरोख्त की छूट भी दे दी है। (धारा 2 क)

धारा दो (ग) में जिन कृषि जिंसों एवं लाइव स्टोक उत्पादों को कृषि उपज में शामिल किया गया है। वे निम्न प्रकार हैं–

- गेहूं चावल या अन्य मोटे अनाज, दालें, खाद्य तेल, तिलहन, साग भाजी, फल मेवा, मसाले, गन्ना, कुक्कुट, सूअर, बकरी, मछली और डेयरी उत्पाद सहित ऐसे खाद्य पदार्थ जो अपनी नैसर्गिक या फिर प्रसंस्कृत रूप में मानव के लिए हैं।
- खली और अन्य पशु चारा।
- कच्ची कपास, ओटी अथवा बिना ओटी हुई बिनोला और कच्चा पटसन।

धारा 3 के अंतर्गत कंपनियों को किसानों की उपज का व्यापार कहीं जाकर करने की छूट दे दी गई है। धारा 6 के अंतर्गत इन कंपनियों पर किसी राज्य के मंडी कानून अथवा पहले से कायम कोई अन्य कानून लागू नहीं होंगे। धारा 7 (1) के अंतर्गत केंद्र सरकार ही कृषि उत्पाद के लिए कीमत, बाजार, सूचना प्रणाली की रूपरेखा तैयार कर सकती है।

कंपनी और किसान के बीच पैदा किसी विवाद के निपटारे का अधिकार उपखंड अधिकारी को दिया गया है। फैसले के खिलाफ अपील भी ऊपर के प्रशासनिक अधिकारी के यही कर सकेंगे। इस कानून की सबसे खतरनाक बात यह है कि धारा 15 के तहत " किसी सिविल न्यायालय को यह अधिकार नहीं होगा। कि वह उपखंड अधिकारी अथवा ऊपर के प्रशासनिक अधिकारी द्वारा किए गए फैसले पर सुनवाई कर सके।"

आवश्यक वस्तु (संशोधित) कानून 2020

1955 के आवश्यक वस्तु कानून में संशोधन कर दिया

गया। इस कानून में धारा तीन की उप धारा एक के पश्चात 1 (क) जोड़ दी गई है। इसके तहत "आवश्यक खाद्य पदार्थ और अनाज, दाल, खाद्य तेल, तिलहन आलू प्याज आदि का नियमन युद्ध और अथवा अकाल जैसी असाधारण स्थिति में ही किया जा सकेगा।" जाहिर है पहले कानून के जरिए देशी विदेशी कंपनियों को कृषि जिंसों के व्यापार पर कब्जा कर लेने का रास्ता खोल दिया। और अब आवश्यक वस्तु कानून में संशोधन के जरिए उन्हें जमाखोरी करने की पूरी छूट दे दी गई है।

कारगर बनाने की बजाय एमएसपी का खात्मा–

1971 में कृषि जिंसों की सरकारी खरीद की एक कारगर व्यवस्था कायम की गई थी। जिसके जरिए कुछ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा सरकार द्वारा की जाने लगी। सरकार द्वारा विभिन्न सरकारी संस्थाओं के जरिए फसलों की खरीद भी कराई जाने लगी। एफसीआई का गठन किया गया । सरकारी गोदामों में अनाज रखा जाने लगा। इसके जरिए यह गारंटी करने की कोशिश की गई कि दुनिया की मंडी में अनाज के दाम कितने ही नीचे गिर जाएं, हम अपने किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य पर भुगतान कर सकेंगे। इसी तरह विश्व मंडी में अनाज के दाम कितने भी ऊपर चढ़ जाएं, हम अपने उपभोक्ताओं को राशन प्रणाली के जरिये सस्ते में अनाज पहुंचाकर उन्हें भुखमरी से बचा सकेंगे। किसी आपात स्थिति में यह सरकारी अनाज के भंडार देश की जनता को भुखमरी से बचाने में कारगर भूमिका अदा करते रहे हैं। जैसे कोरोना संकट के दौर में यह संभव हो सका।

यद्यपि यह व्यवस्था गेहूं और चावल तक सीमित रही। वह भी पंजाब हरियाणा तक सिमट कर रह गई । पश्चिमी यूपी में संघर्ष करने के बाद कुछ किसान समर्थन मूल्य प्राप्त करने में सफल हो जाते थे । जरूरत इस व्यवस्था को पूरे देश में किसानों के लिए कारगर तरीके से लागू करने की थी। लेकिन मोदी सरकार ने आते ही इस समूची व्यवस्था का खात्मा करने, एफ सी आई को भंग करने पर रिपोर्ट देने के लिए शांताकुमार कमेटी गठित कर दी। जिसकी रिपोर्ट आ चुकी है । पूरी व्यवस्था का खात्मा करने की पहल कर दी है । एफ सी आई जहां 2014 में 1 लाख 70 करोड़ रुपये के कर्ज में थी । अब 3लाख 50 हजार करोड के कर्ज में डूबा दी गई। उसके गोदामों को अदानी को सौंपा जा रहा है।

मौत का वारंट

कृषि जिंसों के व्यापार में कंपनियों के आने से कृषि उत्पादन मडी समितियों का खात्मा निश्चित है।

तीनों कानूनों को मिलाकर देखने से यह स्थिति भयंकर रूप में सामने आती है। जब कंपनियां ठेके पर किसानों के खेत ले लेंगी तो उनकी पूरी फसल स्वयं ही खरीदेंगी। तब हमारी मंडियों में किसान की कौन सी फसल आएगी? जाहिर है ये मंडियां धीरे–धीरे खत्म हो जाएंगी।आढती बर्बाद हो जाएंगे। मंडियों में कार्यरत करोड़ों मजदूर अपना काम गवा बैठेंगे। शहरों कस्बों की रेहड़ी पटरी वाले खत्म हो जाएंगे।

मंडियों के खत्म होते ही तथा एमएसपी व्यवस्था ध्वस्त होते ही कृषि जिंसों के व्यापार पर कॉर्पोरेट का पूरा कब्जा हो जाएगा। फिर किसान की फसलों को सस्ते में लूटने तथा उपभोक्ता को महंगे में बेचने का एक भयावह दौर शुरू होगा। जिसकी भारी कीमत देश के गरीब उपभोक्ताओं , शहरी मध्यम वर्ग एवं आम उपभोक्ताओं को चुकानी होगी।उधर खुदरा व्यापार में वॉलमार्ट जैसी कंपनियों के आ जाने के बाद खुदरा जिंसों के दुकानदार और व्यापारी बाजार से लुप्त हो जाएंगे।

इसकी भयावह तस्वीर इथोपिया सूडान जैसे अफ्रीकी देशों में देखी जा सकती है। जहां हजारों कंपनियां वहां की खेती और कृषि जिंसों के व्यापार पर कब्जा कर चुकी हैं। जो वहां पैदा अनाज तक को भी मुनाफे के लिए दूसरे देशों में बेचती हैं। परिणाम स्वरूप वहां की जनता भारी कुपोषण का शिकार बनी हुई है। नर कंकालो में तब्दील होती जा रही है। मोदी सरकार ने इन कानूनों को बनाकर भारत को इसी महाविनाश की तरफ धकेल दिया है।

उधर दुनिया के कृषि जिंसों का व्यापार करने वाली चंद कंपनियां भारत के विशाल कृषि क्षेत्र को अपने शिकंजे में लेने पर आमादा है। जो दुनिया का "फूड बास्केट" बनने को लालायित है। अडानी अंबानी को अपना जूनियर पाटनर बना रही है। देश के सबसे बड़े सांप्रदायिक गिरोह को इन्होंने अपना घोड़ा बना लिया है । यह स्थिति भारत के भविष्य की भयावह तस्वीर पेश करती है।

कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) कृषि मूल्य आश्वासन एवं कृषि सेवा समझौता कानून 2020–

यह कुख्यात ठेका खेती का ही कानून है। जिस पर भ्रमित करने वाले शब्दों की परत चढ़ा दी गई है। इसका सीधा असर यह होगा कि अब भारत में किसान खेती नहीं करेंगे बल्कि देशी–विदेशी कंपनियां उन से खेती कराएंगी।

ज्ञात हो कि आजादी से पहले भी विदेशी कृषि कंपनियां भारत के किसानों से नील और अफीम आदि की खेती कराती थी। लेकिन जैसे ही देश आजाद हुआ । आजाद भारत का

पहला कृषि भूमि कानून बनाया गया। जिसमें विदेशी कंपनी सहित सभी कारपोरेट को देश की खेती में खेती की जमीन खरीदकर अथवा ठेके पर लेकर खेती करने पर रोक लगा दी गई थी।

मगर अटल सरकार ने 2002 में इस कानून को खत्म कर दिया। इससे पहले अटल सरकार द्वारा सत्ता में आते ही मालेगांव में तमाम देशी विदेशी कंपनियों का समागम किया गया। जिसमें भारतीय खेती में कॉर्पोरेट खेती और ठेका खेती के लिए तमाम बाधाओं को हटाने का पूर्ण आश्वासन दिया गया था। बाद में आयात से मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त कर दिए गए। यह भारतीय खेती का कारपोरेट के हवाले करने की तरफ एक और बड़ा कदम था।

इसके बाद से हरित क्रांति के दौर में कायम खेती के राज्य समर्थित ढांचे को धीरे–धीरे खत्म किया जाने लगा। कृषि सब्सिडी में कटौती शुरू कर दी गई। खाद, बीज, डीजल, बिजली, पानी की कीमत बढ़ाकर कृषि लागत में इजाफा किया गया। एमएसपी के समूचे ढांचे को नकारा बना दिया गया। सस्ते कृषि ऋणों में बैंक के निजीकरण की पहल से कमी हुई। कृषि में सरकारी निवेश में बराबर कटौती की जाती रही है। पेटेंट कानूनों को बदलकर वस्तु का पेटेंट 7 वर्ष से बढ़ाकर 20 वर्ष तक कर दिया गया।

खेती के आत्मनिर्भर ढांचे को खत्म करने के इस अपराध में हर रंगत की सरकारों के हाथ रंगे हुए हैं। परिणाम किसानों का खेती से मोहभंग होने के रूप में सामने आया है। इस दौर में लाखों किसानों द्वारा की गई आत्महत्या की घटनाओं ने खेती में पैदा हो रहे भयावह हालात का जिंदा सबूत पेश कर दिया है।

ठीक इसी बीच 2018 में मोदी ने ठेका खेती का मॉडल कानून पेश कर दिया। जिसमें किसानों द्वारा कंपनियों को खेत दिए जाने, अनुबंधित खेती के उत्पादों पर किसी तरह का जीएसटी नहीं लगाने, कंपनियों के उत्पाद को सभी राज्यों के मंडी कानूनों से ऊपर रखने, तथा किसानों द्वारा अनुबंधित खेतों में किसी प्रकार का निर्माण नहीं करने आदि के प्रावधान कर दिए थे।

उसके बाद कोरोना आपदा का अवसर की तरह इस्तेमाल करते हुए मोदी सरकार ने तीन कृषि कानून बना दिए। इसमें से एक ठेका खेती का यह कानून भी है जो भारतीय खेती का खात्मा करके जमीनों को बड़ी निजी कंपनियों द्वारा हड़पने का कानून है।

कानून के काले प्रावधान

- पहले तो जिन निजी कंपनियों पर खेती की जमीन खरीदकर अथवा ठेके पर लेकर खेती करने पर रोक लगी हुई थी उसे खत्म कर दिया गया है। किसान अपने खेतों को निजी कंपनियों को निश्चित अवधि के लिए देने के लिए समझौता कर सकेंगे।
- यह समझौता एकदम बेमेल होगा। एक तरफ दुनिया या हमारे देश को लूटने वाली कम्पनियां होंगी। दूसरी ओर साधारण किसान होंगे।
- इस कानून की धारा 4 (1) के अनुसार समझौते में फसल की क्वालिटी ग्रेड, मानक व कीमत आदि दर्ज होगी। जाहिर है कंपनी के लिए फसल की क्वालिटी व मानक को

आधार बनाकर फसल खरीद से ना नूकर करना कितना आसान होगा। उस समय किसान की फसल की कीमत गिरा देना आम बात होगी।

फिर कानून की धारा 4 (4) में क्वालिटी ग्रेड और मानक की रिपोर्ट देने के लिए एक 'थर्ड पार्टी' की नियुक्ति का प्रावधान किया गया है । यह ''थर्ड पार्टी" कौन होगी ? इस की नियुक्ति कौन करेगा? इसके बारे में कानून मोंन है। धारा 13 (1) के अनुसार किसान और कंपनी के बीच हुए समझौते पर कोई विवाद पैदा होने पर उसका निपटारा एसडीएम के स्तर से किया जाएगा। समझौते में पक्षकारों को मिलाकर 'सुलह बोर्ड' बनाने का प्रावधान है। यदि सुलह बोर्ड के प्रतिनिधियों के नाम समझौते में नहीं है तो एसडीएम अपनी तरफ से 'सुलह बोर्ड' में किसी व्यक्ति का नाम रख सकता है। अंतिम सुनवाई का अधिकार एसडीएम को ही होगा ।

धारा 14(3) के अनुसार "उपखंड अधिकारी द्वारा पारित प्रत्येक आदेश का वही बल होगा जो सिविल न्यायालय की किसी डिक्री का होता है। और वह उसी रूप में प्रवर्तनीय होगी। जैसे सिविल प्रक्रिया 1908 के अधीन कोई डिक्री होती है। जब तक की धारा 14(1) के अधीन अयोग्य न कर दी जाए। अपील कलेक्टर अथवा उसके द्वारा नाम निर्देशित अपर कलेक्टर के यहां की जा सकेगी।

"इस कानून का सबसे खतरनाक प्रावधान धारा 19 में किया गया है। जिसके अनुसार 'उपखंड अधिकारी अथवा अपील अधिकारी द्वारा दिए गए किसी निर्णय के खिलाफ किसी भी सिविल न्यायालय को सुनवाई का अधिकार नहीं होगा"। इसके जरिए पहली बार किसानों का न्याय पाने के लिए अदालत में जाने का अधिकार ही छीन लिया गया है। इसी तरह धारा 20 के तहत इस कानून के जरिये राज्यों के अधिकारों पर पूरी तरह अंकुश लगा दिया गया है कि" कोई राज्य सरकार इस कानून के प्रावधानों में किसी भी तरह का परिवर्तन नहीं कर सकती है। उसके अधीन सिर्फ कुछ उपनियम बना सकती है"। यह गैर जनतांत्रिक प्रावधान उस स्थिति में लाया गया है जबकि हमारे संविधान में "कृषि" राज्य सूची में दर्ज है। कानून में बदलाव की शक्ति भी केंद्र सरकार ने अपने हाथ में रखी है ।

कानून का विध्वंसकारी प्रभाव

यह सच है कि निजी कंपनियां किसानों के खेत जबरिया अनुबंध में शामिल नहीं करेंगी। परंतु जब लाखों किसानों को आत्महत्या करने तक मजबूर कर दिया गया है। एक सरकारी रिपोर्ट के अनुसार 40 फ़ीसदी तक किसान खेती छोड़ कर भागना चाहता है।और कोई विकल्प नहीं होगा। ऐसे में किसान अपनी जमीनों को कंपनियों को देने को बाध्य होंगे। और कंपनियों द्वारा बहुत ही आसानी से किसानों के खेतों को अनुबंध पर ले लिया जाएगा। धारा 2(5) के अनुसार अनुबंधित खेत पर कृषक से स्वतः अथवा मजदूर द्वारा अथवा कृषि उत्पादक संगठन (भी शामिल है जिन्हें किसान को–ऑपरेटिव भी कहा जा सकता है) से भी खेती करा सकती है। अतः हमें इस हालात में तथाकथित किसानों के सहकारों की भूमिका और चरित्र को भी समझना होगा। धारा 2(घ) के अनुसार किसानों को खाद बीज, कीटनाशक, तकनीक कृषि यंत्र आदि कंपनियां सप्लाई करेंगी। परिणामस्वरूप कृषि के इनपुट के धंधों में लगे करोड़ों लोग अपनी रोजी रोटी गंवा रहे होंगे। साथ ही कंपनियां किसानों को मनमाने रेट पर इनपुट उपलब्ध करा रही होंगी।

एक अन्य प्रावधान है कि किसानों पर कंपनी के किसी भी प्रकार के बकाया की वसूली राजस्व वसूली की तरह होगी। जिसमें जमीन की नीलामी करके वसूली भी शामिल है। अनुबंध करने वाली कंपनियों पर कानून की धारा 8 में किसानों की आंखों में धूल झोंकने का प्रावधान किया गया है। जिसमें कहा गया है की स्पॉन्सर होने की स्थिति में, जमीन खरीद कर लेने व उस पर स्थाई निर्माण करने से रोक दिया गया है। जबकि जमीन नीलाम होने पर अपनी दूसरी अथवा फर्जी कंपनी और व्यक्ति द्वारा खरीद करा लेना कितना आसान होता है सभी जानते हैं। इस तरह किसानों की जमीनों को हड़प लेने का खतरा इस कानून में मौजूद है। जो समूची खेती पर कंपनियों के कब्जे का ख़तरनाक संकेत है।

1. यह कानून किसानों के लिए खतरा तो है ही। मगर उससे पहले गुजर बसर के लिए दूसरे के खेत पर बटाई अथवा जिंस पर खेत लेकर खेती करने वाले किसान अपना रोजगार गवा बैठेंगे। जिनकी आज भी बहुत बड़ी संख्या है। क्योंकि उनके लिए बटाई के लिए खेत ही उपलब्ध नहीं होंगे।

2. खेत में मजदूरी करके गुजर करने वाले मजदूरों की संख्या देश में अभी भी करोड़ों में है इन लोगों को परंपरागत तरीके से हो रही खेती में जो रोजगार मुहैया हो रहा है।वह आधुनिक तकनीक से खेती करने वाली कंपनियों के फॉर्म में संभव नहीं हो सकेगा। ऐसे में ये करोड़ों लोग कहां जाएंगे। भूमिहीन खेत मजदूरों को रहने के लिए झोंपड़ी तक डालने की जगह कहां उपलब्ध होगी?

3. आज भी देहातों में बहुत बड़ी संख्या ऐसे परिवारों की है जो 1 या 2 दुधारू पशु पालते हैं। दूध बेचकर अपनी रोजी–रोटी चलाते हैं । तेरे मेरे खेतों में घास काट कर अथवा गन्ने के अंगोला(हरी पत्ती) करके अथवा भूसा लेकर काम चलाते हैं। कंपनियों के कृषि फार्म बनते ही इन सब के चारे के स्रोत खत्म हो जाएंगे। इन लोगों का जीना दूभर हो जाएगा।

4. ठेका खेती से एक और बड़ा हमला कृषि से जुड़े कुटीर धंधे करने वाले करोड़ों लोगों की रोजी–रोटी पर होगा। अनुबंध पर खेत देने वाले किसान हों या मजदूर, ठेका खेती आते ही चारा पैदा करने का कोई तरीका बच नहीं पाएगा। परंपरागत पशु पालन पूरी तरह खत्म हो जाएगा। तो आज के डेयरी उद्योग का क्या होगा? डेयरी उद्योग में काम करने वाले लोग कहां जाएंगे ? इसी तरह एक्सपेलर, खराद मशीन, धान मशीन, आटा चक्की, कपास ओटने जैसे सारे कुटीर धंधे खत्म हो जाएंगे। इन धंधों पर जिंदा रहने वाले लोग कहां जाएंगे।

5. इसी तरह भैंसा बुग्गी अथवा ट्रैक्टर से सामान ढुलाई ट्यूबवेलों की मोटर रिपेयरिंग, स्पेयर पार्ट्स जैसे धंधे करने वाले लोग कहां जाएंगे?

6. इन कानूनों के लागू होते ही सरकारी अनाज भंडार निजी कंपनियों के गोदामों में बदल जाएंगे। अतः सार्वजनिक वितरण प्रणाली के जरिये गरीबों को मिलने वाला सस्ता राशन नहीं मिल पायेगा।अब तक कायम हुई थोडी बहुत खाद्य सुरक्षा भी खतरे में पड़ जाएगी।

कुल मिलाकर ठेका खेती समेत तीनो कानून ,किसानों की जमीनों को हड़प कर पूंजी के आदिम संचय की जंगली प्रवृत्ति का आधुनिक रूप है। कृषि जिंसों के व्यापार पर कब्जा करके इंसानी भूख और उनके जिंदा रहने को मुनाफे का आधार बनाया गया है। जमाखोरी के जरिए इंसान की खोपड़ी में भरकर खून पीने की प्रवृत्ति का फिर से उभार है। देश की एक अरब तीस करोड़ की आबादी को मोदी सरकार चारा बनाकर इन्हीं कंपनियों के आगे डाल रही है।

अंत में इस महाविनाश के कानूनों के संदर्भ में दो ग्राउंड रिपोर्टों की जानकारी देना यहां उचित होगा।

पहली रिपोर्ट बिहार में 2006 में कृषि मंडियों को समाप्त किए जाने के बाद किसानों की हालत को बयां करती है। संयतन बेरा की रिपोर्ट है जो 10 मार्च 2021 को हिंदुस्तान अखबार में छपी है।

"बिहार में 2006 में सरकारी मंडियों को खत्म कर दिया गया था। तब से वहां ऐसे चल रहा है कि किसान अपनी उपज का मोल भाव नहीं कर सकते। उपज को न तो वर्गीकृत किया जाता है। और न ही नीलम। जबकि अन्य राज्यों में यह प्रथा है। बिहार में अनेक किसानों को बाजार मूल्य की कोई विश्वसनीय जानकारी नहीं होती है । दूसरी जगह विनियमित बाजार दैनिक नीलामी डाटा रिकॉर्ड करते हैं। और एक आधारभूत मूल्य तय करते हैं"।

किसान मंडियों में कदम रखने में डरते हैं। बड़े व्यापारियों की तूती बोलती है। स्थानीय व्यापारी किसानों को कम भुगतान करते हैं"। अररिया जिले के वीरेन्द्र बहरदर तुर्केली गांव के रहने वाले हैं। 1 एकड़ से भी कम जमीन पर खेती करते हैं। 1 वर्ष में दो फसल उगाते हैं। धान की फसल अक्सर बाढ़ में बह जाती है। मक्का ही इस किसान के लिए नगदी फसल का स्रोत है। पिछले साल वीरेन्द्र ने अपनी मक्का एक स्थानीय व्यापारी को 800/– रु. कुंटल में बेच दी। जो सरकार के घोषित रेट के आधे से भी कम है। वीरेन के खेत से मंडी की दूरी 70 किलोमीटर है" ।

"नेशनल काउंसिल फॉर अप्लाइड इकोनामिक रिसर्च की 2019 की रिपोर्ट में कहा गया है कि "2006 में एपीएमसी एक्ट के उन्मूलन के बाद बाजारों के निर्माण में निजी निवेश एवं एवं सुविधाओं के सुदृढ़ीकरण का काम बिहार में नहीं हुआ ।खरीद में सरकारी एजेंसी की भागीदारी और अनाज की खरीद का स्तर कम होना जारी है । यह व्यापारी अनियंत्रित तरीके से फसल को बहुत कम कीमत में तय करते हैं।"

बिहार में भ्रष्टाचार खत्म करने के नाम पर आज भाजपा–नीतीश कुमार सरकार ने सरकारी मंडियों को खत्म किया।आज भी वही सरकार है। मगर पूर्णिया के गुलाब बाग मंडी में किसानों की फसल को मनमाने तरीके स लूटा जा रहा है। अगर कोई किसान 100 कुंतल मक्का लेकर आता है। तो व्यापारी कम से कम 1 कुंतल की कटौती कर देते हैं।

"अधिकांश किसान अपने भाग्य को ही इसके लिए जिम्मेदार ठहराते हैं। तभी अररिया के रामपुर गांव के 26 वर्षीय शमशाद को लगता है कि फसल कटाई के मौसम में हरियाणा और पंजाब की मंडियों में काम करना बेहतर है। क्योंकि वहां 1 महीने में 20000 रु. से अधिक कमा सकते हैं। जो राज्य के सीमांत किसानों के पूरे सीजन की कमाई से अधिक है।"

मंडियों का खात्मा करके समूचे मुल्क को बिहार के रास्ते पर धकेलने का काम इन कानूनों में किया गया है।

दूसरी रिपोर्ट अमेरिका से है। इतियान ब्रेडव्रता पेन ने, जो अमेरिका से है। 10000 किलोमीटर तक खेतों की यात्रा करके तैयार की है। यह रिपोर्ट 8 मार्च 2021 को टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी है।

"अमेरिका में कुल खेती की जमीन पर 90 फ़ीसदी छोटे किसान हैं। मगर वह कुल कृषि बाजार मूल्य का मात्र 25 प्रतिशत ही पैदा करते हैं।"

"फरवरी 2020 में फार्म इनकम +1400 नकारात्मक रही। ब्रेन्ट ब्रेवर नामक किसान ने बताया कि पिछले 20 वर्ष में गेहूं की पैदावार लागत में 3 गुना वृद्धि हुई है। जबकि गेहूं के दाम 1865 ई0 अर्थात सिविल वार के समय के बने हुए हैं।

"किसानों में आत्महत्या की दर राष्ट्रीय औसत का 4–5 प्रतिशत है। एक बैंक अधिकारी ने आत्महत्या के नोट में

लिखा कि उसे बैंक प्रबंधन द्वारा दिवालिया किसानों से जबरिया कर्ज वसूली के लिए कहा जा रहा है।"

"अमेरिका में 80 फ़ीसदी देहाती काउंटीज, जनसंख्या के घटते जाने की गवाही दे रही है। नेयलोर नामक आयोवा के एक अनाज उत्पादक किसान के अनुसार फार्म खत्म हो रहे हैं। लोकल बिजनेस बीज सप्लाई आदि बंद हो गए हैं। रिपेयर की दुकान यहां तक कि अस्पताल गायब होते जा रहे हैं। आज अमेरिका में देहाती जिलों में 1000 स्कूल प्रतिवर्ष बंद हो रहे हैं। सरकारी मदद पर चलने वाले छोटे कृषि फार्म ,चौथाई मिलियन बंद हो चुके हैं। 1 मिलियन से अधिक किसान पलायन कर चुके है। यह सब बड़े बड़े कृषि व्यापारियों के कारण हुआ है। ठेका खेती व कृषि जिंसों के व्यापार पर इन बड़े व्यापारियों का कब्जा हो गया है। फार्म गेट इनकम भर भरा कर बैठ गई।

"इस समय कुल अमेरिकन जी डी पी का एक प्रतिशत ही खेती से आ रहा है।जो 1930 की मंदी में भी 8 प्रतिशत था। खेती में 70 प्रतिशत श्रम शक्ति सन 1800 में थी जो आज 2 प्रतिशत रह गई है।

"1950 में जितने किसान थे उनकी संख्या में 91 प्रतिशत की गिरावट आई है।इस समय अमेरिका में 75 प्रतिशत मुर्गी फार्म गरीबी की रेखा से नीचे पहुंच गए हैं। डेयरी उद्योग बंद हो रहे हैं।"

इस तरह जब रोनाल्ड रीगन अमेरिका का राष्ट्रपति बना। वह मुक्त बाजार का धर्म योद्धा बन कर उभरा था। बाजार से सरकारी अंकुश उठा लिये गए थे। कृषि क्षेत्र को प्रतियोगात्मक बाजार के लिए खोल दिया गया था। किसानों की हिफाजत का सारा ढांचागत सुरक्षा कवव खत्म कर दिया गया। आज फसलों की लागत बढ़ गई। परिणामस्वरूप आज अमेरिका के देहाती क्षितिज पर वीरान कस्बे, गांव उभर कर आ गए। जबकि यह दुनिया का सबसे शक्तिशाली देश बोला जाता है।

मोदी इन तीन कृषि क़ानूनों को लाकर देश के किसानों और आम जनता को विकास के नाम पर इसी महाविनाश की तरफ धकेल रहा है। यह वही अमरीका जैसी तरक्की का रास्ता है। भारत जैसे विशाल आबादी के गरीब देश मे इसकी तस्वीर और भयावह होगी।

इसके साथ ही बिजली विधेयक 2020 ,देश की खेती और किसानों पर बड़ा हमला है। आंदोलनकारी किसानों के साथ वार्ता के बीच इस विधेयक से किसानों के खिलाफ प्रावधानों को हटा देने का वायदा भी सरकार कर चुकी है। मगर चालू वर्ष का बजट पेश करते हुए, "बिजली विधेयक 2021" में इस हमले को बरकरार रखा है। जिसमें बिजली वितरण का पूरी तरह निजीकरण करके निजी कंपनियों के हवाले किया जाएगा। किसानों को मिलने वाली बिना मीटर के फ्लैट रेट की सस्ती बिजली के स्थान पर महंगी बिजली मिलेगी। जिसके चलते बहुत जल्दी किसान अपने खेतों को कंपनियों को सौंपने को मजबूर हो जाएंगे। गरीब आदमी एक बल्व तक नहीं जला पाएगा। बिजली सिर्फ अमीरों के उपयोग की चीज हो जाएगी।

इसके साथ ही केंद्र द्वारा घोषित राष्ट्रीय जल नीति के लागू होने पर स्थिति और भयावह हो जाएगी। मोदी सरकार इसे लागू करने की तरफ तेजी से कदम बढ़ा रही है। जल नीति के तहत देश में कहीं भी किसी भी व्यक्ति को मुफ्त में पानी नहीं मिलना चाहिए। पानी का भी निनिजीकरण किया जाना है। अटल सरकार सबसे पहले छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नाम की नदी के 23.5 किलोमीटर इलाके को एक विदेशी कंपनियों को बेच कर गई थी। अब तक इसी तरह टुकड़ों में देश की लगभग 50 नदियों के सौदे निजी कंपनियों के साथ हो चुके हैं। या होने जा रहे हैं। इसी तरह अंग्रेजों के बनाए 1882 के "भारतीय भोगाधिकार कानून" में संशोधन का प्रावधान 'जल नीति' में किया गया है। क्योंकि इस कानून में खेत के मालिक का अधिकार खेत से निकलने वाले पानी पर सुनिश्चित किया कर दिया गया था। इसी तरह घरों की जमीन पर से निकलने वाले पानी पर मकान मालिक का हक होता था। संसोधन के बाद देश के भूगर्भ जल पर निजी कंपनियों का कब्जा हो जाएगा। फिर खेत आपका होगा,तो पानी कंपनियों का। यही हाल घरों के पानी का होगा। इसके बारे में जानने पर ही रोंगटे खड़े होते हैं। पानी के निजीकरण के बाद खेती तो दूर की बात है आदमी जिंदा कैसे रहेगा, यह बड़ा सवाल है।

2008 में विश्व बैंक ने कृषि जमीन के बारे में एक रिपोर्ट जारी की थी। यह रिपोर्ट विदेशी कम्पनियों और मोदी सरकार के बीच साठ गांठ के षड्यंत्र को पूरी तरह उजागर कर देती है। रिपोर्ट में कहा गया है –

"भारत में कृषि जमीन एक महत्वपूर्ण संसाधन है। जो जाहिलों के हाथ में है। और वे उसका सही सदुपयोग नहीं कर पा रहे हैं। अतः हमें इनके हाथों से इन जमीनों को लेकर ऐसे हाथों में सौंपने की जरूरत है। जो इसका सही सदुपयोग कर सके। और वह सिर्फ कॉर्पोरेट जगत ही हो सकता है।"

अंत मे मोदी सरकार का राष्ट्रवाद और देशभक्ति का भंडाफोड़ करने वाली विश्व बैंक की रिपोर्ट के बारे में जानना जरूरी है यह रिपोर्ट 2008 में जारी की गई जो विदेशी कंपनियों और मोदी सरकार के बीच साठगांठ का भंडाफोड़ करती है। लगता है तीनों कृषि कानून विश्व बैंक के इसी निर्देश को लागू करने के लिये ही बनाये गए हैं। □

किसान संघर्ष और पूंजीवाद का संकट

–पी कृष्णप्रसाद

दिल्ली की सीमाओं पर चल रहे किसानों के संघर्ष को भाजपा और दक्षिणपंथी मीडिया ने 'पंजाब केंद्रित संघर्ष' के रूप में दिखाया है। जबकि किसान संगठनों के नेताओ का कहना है कि इस किसान आन्दोलन का चरित्र राष्ट्रव्यापी है। यह 8 दिसंबर 2020 और 26 मार्च 2021 को हुए, दोनो भारत–बंद सहित सभी राष्ट्रीय स्तर की बड़ी हड़तालो की सफलता के साथ–साथ व्यापक रोड व रेल रोको कार्यवाहियों एवम् इस अवधि के दौरान राज्य, जिलो व निचले स्तर पर बड़े पैमाने पर हुई लामबंदियों से साबित होता है। हालाँकि, यह ऐतिहासिक जन आन्दोलन प्रकृति में ना सिर्फ राष्ट्रव्यापी है, बल्कि विश्व भर में किसान और मजदूर वर्ग का उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण–एलपीजी के नव–औपनिवेशिक आदेश के खिलाफ संघर्ष का अभिन्न अंग है। जो कि दुनिया भर के देशो पर साम्राज्यवाद द्वारा थोपी जा रही है।

वर्तमान में, विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था एक प्रणालीगत संकट से गुजर रही है, जिस से दुनिया भर में बड़े पैमाने पर लोगों की आजीविका प्रभावित हुई है। इस संकट का भारत की अर्थव्यवस्था पर भी गंभीर प्रभाव पड़े है। स्वाभाविक रूप से, इन नीतियों का बड़े पैमाने पर प्रतिरोध उन लोगों द्वारा किया जा रहा है, जो आर्थिक संकट का खामियाजा भुगत रहे हैं। भारत में चल रहे ऐतिहासिक किसान संघर्ष ने दुनिया भर में किसान और मज़दूर वर्ग को प्रेरित किया है और यह उत्पादक वर्गों, किसानों और मज़दूर वर्ग द्वारा साम्राज्यवादी वैश्वीकरण के खिलाफ वर्ग संघर्ष का एक अभिन्न अंग है।

1930 में विश्व पूँजीवादी व्यवस्था के सामने पहली बार प्रणालीगत संकट आया जिसे 'द ग्रेट डिप्रेशन' के नाम से जाना जाता है। इस ने दुनिया भर में मूलभूत राजनीतिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया था और साम्राज्यवादी औपनिवेशिक व्यवस्था दुनिया भर में ध्वस्त हो गई थी। दो दशकों के भीतर भारत और चीन सहित कई स्वतंत्र राष्ट्र अस्तित्व में आए थे। एक मात्र समाजवादी देश सोवियत संघ की जगह, एक पूरा समाजवादी खेमा उभरा के सामने आया। समाजवाद और साम्राज्यवाद के बीच का अंतर्विरोध अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य अंतर्विरोध बन कर उभरा।

1980 के दशक के आते–आते, साम्राज्यवादी ताकतों ने एलपीजी नीतियों के आधार पर दुनिया के देशों पर बाजार के शोषण का नव–औपनिवेशिक आदेश को लागू करना शुरू कर दिया। जो सैन्य शक्ति आधारित पूर्ववर्ती औपनिवेशिक आदेश के स्थान पर अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी के प्रभुत्व ने जगह ली। 1990 की शुरुआत में सोवियत संघ के पतन ने इस साम्राज्यवादी प्रयास में मदद की और सुविधाजनक बना दिया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा 1991–96 में नरसिम्हा राव सरकार के दौरान विश्व व्यापार संगठन समझौते और कई मुक्त व्यापार समझौतों सहित एलपीजी नीतियों को लागू करने की पहल की थी। इन उपायों में सार्वजनिक क्षेत्र का विनिवेश, कृषि क्षेत्र को विश्व बाजार के लिए खोलना और सेवा क्षेत्रों सहित अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों का निजीकरण शामिल था। इन नीतिगत बदलावों ने कांग्रेस की अगुवाई

वाली पूर्व केंद्रीय सरकारों द्वारा विकसित किए गए विकास पथ पर हमला किया था, जिस में तत्कालीन सोवियत संघ की मदद से सार्वजनिक क्षेत्र व सामाजिक कल्याण पर जोर देते हुए, खाद्य सुरक्षा, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाएं तथा संगठित क्षेत्र में रोजगार सुनिश्चित करने के लिए बनाया गया था। इस बदलाव के परिणाम गंभीर और प्रकृति में विध्वंसक रहे हैं।

एलपीजी की नीतियों के लागु किए जाने से पैदा हुई परिस्थितियों ने किसान के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य और मजदूर वर्ग के लिए न्यूनतम वेतन तथा रोजगार सुरक्षा पर हमला किया है। कृषि क्षेत्र के साथ–साथ औद्योगिक क्षेत्र में विनाशकारी स्थिति पैदा हुई है और बड़े पैमाने पर ऋणग्रस्तता, आत्महत्याओं और आजीविका के संकट को लाया है। गरीब व मंझोले किसानों ने कृषि भूमि के अपने छोटे से टुकड़े व पशु धन को भी खो दिए तथा प्रवासी मजदूर वर्ग में परिवर्तित होने पर मजबूर होना पड़ा। दो प्रमुख उत्पादक वर्गों को पारिश्रमिक आय से वंचित कर दिया गया, जिससे उनकी क्रय क्षमता कम हो गई और औद्योगिक क्षेत्र को भारी मंदी का सामना करना पड़ा तथा इसी से जुड कर बेरोजगारी और मूल्य वृद्धि भी आई। मजदूर संगठनो एवं किसानों, युवाओं और छात्रों के संगठनों ने उनकी आजीविका को प्रभावित करने वाली इस शत्रुतापूर्ण स्थिति के खिलाफ बड़े पैमाने पर संघर्ष किये। व्यापक बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, भ्रष्टाचार, ऋणग्रस्तता और नतीजतन किसान आत्महत्याओं ने लोगों के जीवन को बुरी तरह प्रभावित किया तथा इसके स्वाभाविक परिणामस्वरूप कांग्रेस पर लोगों का रोष बढ़ा, जिसने लोगों पर एलपीजी नीतियों को थोपने की पहल की थी। इसी के चलते चरण दर चरण, कांग्रेस को राज्यों में सत्ता से बाहर कर दिया गया और अंततः केंद्र की सत्ता से भी बेदखल कर दिया गया।

2014 के आम चुनाव में, भाजपा ने कांग्रेस की जगह खुद को शासक वर्गों की राजनीतिक पार्टी के रूप में प्रतिस्थापित किया। हालाँकि, भाजपा के नेतृत्व वाली सरकार भी उन्हीं एलपीजी नीतियों को लागू करती रही जिन्होंने बुनियादी वर्गों की आर्थिक स्थिति को बर्बाद कर दिया था। इसके अलावा, सत्ता में बने रहने के लिए भाजपा, धर्म और पहचान की राजनीति के आधार पर लोगों को विभाजित करने की खतरनाक राजनीतिक रणनीति को ही आगे बढाती रही।

अब जब हम 1990 से तीन दशक आगे आ चुके हैं और वैश्वीकरण के विकास का साम्राज्यवादी मॉडल आम तौर पार विश्व के सभी देशों में विफल रहा है। 1930 की महामंदी के अनुभव के समान आब विश्व पूँजीवादी व्यवस्था एक प्रणालीगत संकट में आ चुकी थी। 2008 के अमेरिकी वित्तीय संकट ने इस आने वाले प्रणालीगत संकट को उजागर किया था। पिछले 13 वर्षों के दौरान, भारत और चीन सहित सभी देशों की विकास दर कम हुई है। साम्राज्यवाद और तीसरी दुनिया के देशों के बीच तथा पूंजीवादी देशों में राज्य और जनता के बीच अंतर्विरोध दिन–प्रतिदिन तेज होते जा रहे हैं।

मोदी सरकार द्वारा तीन कृषि कानूनों और चार श्रम संहिताए लाकर किसान के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य और मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी तथा दोनों उत्पादक वर्गों के लिए रोजगार सुरक्षा को नकार रही है इस के साथ–साथ अन्य प्रासंगिक मुद्दों जैसे खाद्य सुरक्षा को खतरा, किसान से उन की भूमि छिनना तथा भारतीय संविधान के संघीय चरित्र को नष्ट करना आदि भी हैं। इन कृषि कानूनों के खिलाफ और एमएसपी पर कानूनी गारंटी की मांग को लेकर देशव्यापी विशाल किसान संघर्ष ने मोदी सरकार के किसान विरोधी चरित्र को उजागर किया है। केंद्रीय ट्रेड यूनियनों का संयुक्त मंच भी चार श्रम संहिताओ और निजीकरण के खिलाफ तथा अन्य मांगों को लेकर संघर्ष पथ पर है।

भारत में पूंजीवादी संकट का मूल कारण, स्वतंत्रता के बाद से कृषि से जुड़े सवालों को हल ना करना है। सामंती उत्पादन संबंधों को ख़त्म करना और पूंजीवादी उत्पादक शक्तियों को उन्मुक्त करना पूंजीवादी वर्ग के लिए ऐतिहासिक कार्य होगा। व्यापक भूमि सुधार, कृषि आधारित उद्योगों पर जोर के साथ घरेलू औद्योगीकरण और घरेलू बाजार का विस्तार इसे प्राप्त करने के तरीके हैं। हालांकि, सामंती उत्पादन संबंधों को नष्ट करने और कृषि भूमि के पुनर्वितरण को सुनिश्चित करने के बजाय, राज्य मशीनरी को नियंत्रित करने वाले बड़े पूंजीपति वर्ग ने जमींदार वर्ग के साथ गठबंधन किया और साथ ही अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी के साथ भी सहयोग किया। इसे जारी रखने के लिए, साम्राज्यवादी भूमंडलीकरण की नीतियों में समक्ष यह कार्य था की, साम्राज्यवादी व एकाधिकारी पूंजीवादी ताकतों द्वारा उत्पादक वर्गों के शोषण को तीव्र करने का काम करे। कृषि संबंधी सवाल को हल किए बिना, भारत कभी भी बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, खाद्य सुरक्षा, घरेलू उद्योग के विस्तार, बुनियादी ढांचे के विकास, सामाजिक कल्याण, सेवा क्षेत्र के विकास और संबंधित मुद्दों की चुनौतियों को संबोधित नहीं कर सकता है।

भाजपा नेतृत्व वाली मोदी सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय वित्त पूंजी के साथ अधिक से अधिक गठजोड़ करते हुए, एलपीजी

नीतियों के कार्यान्वयन को तेज किया है। इससे नतीजतन बेलगाम मूल्य वृद्धि और व्यापक बेरोजगारी आई है। रसोई गैस और पेट्रोलियम उत्पादों की कीमत में भारी वृद्धि ने मोदी सरकार पर से आम लोगों का भरोसा ख़त्म कर दिया है। "एक राष्ट्र एक बाजार" (वन नेशन वन मार्केट) के नारे के साथ मोदी सरकार कॉर्पोरेट वर्चस्व के तहत एकीकृत देश के रूप में परिवर्तित कर भारत के संघीय चरित्र को नष्ट कर रही है। सरकार रेलवे, बैंक, बीमा, टेलीकॉम, एयर इंडिया, एयरपोर्ट, सीपोर्ट, बिजली, कोयला, तेल एवंम प्राकृतिक गैस, सड़क व पुल, रक्षा क्षेत्र के उपक्रमों सहित सार्वजनिक क्षेत्र के सभी सार्वजनिक उपक्रमों का विनिवेश कर उन्हें विदेशी और घरेलू दोनों कॉर्पोरेट के हाथो सौंप रही है। केंद्र सरकार अधिनायकवादी और केंद्रीकृत कर प्रणाली जीएसटी के माध्यम से राज्य सरकारों की शक्तियों पर हमला कर अपने स्वयं के आर्थिक संसाधनों को बचा रही है। मोदी सरकार विपक्ष और विपक्ष द्वारा चलाई जा रही राज्य सरकारों को अपने दुश्मनों के तौर पर देखती है और उन के लोकतांत्रिक अधिकारों को खत्म करने के लिए ईडी, प्रवर्तन निदेशालय, आयकर व सीबीआई जैसी केंद्रीय बलों का इस्तेमाल उनके खिलाफ शिकारी कुत्तों के तौर पर करती है और यहां तक कि किसी भी नागरिक के खिलाफ भी जो उन के खिलाफ आवाज़ उठता हो।

मोदी सरकार मजदूर वर्ग और किसानों के हितों की रक्षा के लिए एलपीजी नीतियों के कार्यान्वयन बाद से पिछले तीन दशकों के अनुभव का आलोचनात्मक मूल्यांकन के लिए तैयार नहीं है। विनिवेश नीति के हिस्से के रूप में, यह हमारी राष्ट्रीय परिसंपत्तियों को 'विकास' के नाम पर विदेशी और घरेलू कॉरपोरेट ताकतों को बेच रही है और जो इन राष्ट्र–विरोधी कार्यो का विरोध कर रहे है, उन सभी पर देशद्रोह का आरोप लगा रही हैं। भाजपा बेरोजगारी, मूल्य वृद्धि, कृषि संकट और आर्थिक मंदी जैसे आजीविका से जुड़े वास्तविक मुद्दों से लोगों का ध्यान हटाने के लिए लव जिहाद, गोहत्या, नागरिकता अधिनियम, जम्मू और कश्मीर के विभाजन आदि जैसे गैरजरूरी मुद्दों को उठाने में लगी हुई है। । दिल्ली में फरवरी 2020 में हुए सांप्रदायिक दंगों जिस में 56 लोगों की मौत हो गई थी, ने फिर से भाजपा का मानव विरोधी नंगा चेहरे उजागर कर दिया था।

हालिया राज्य विधानसभाओं के चुनावों के विश्लेषण से पता चलता है कि भाजपा ने जितने राज्यों को जीता है, उससे कहीं अधिक गवा दियें है। उन्हें कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, दिल्ली, गोवा, अरुणाचल प्रदेश, हरियाणा और महाराष्ट्र में हार का सामना करना पड़ा। भाजपा ने कॉरपोरेट फंडिंग की बड़ी धनराशि के दाम पर, उन राज्यों में भी जहां वो पराजित हुआ थी विधायक खरीदकर (विशेष रूप से कांग्रेस से) सरकारें बनाई हैं। इस तरह का खुला भ्रष्टाचार ताकत नहीं बल्कि भाजपा की नैतिक गिरावट को दर्शाता है। गुजरात में, हालांकि भाजपा ने कम सीटें हासिल की। किसान आन्दोलन के संदर्भ में, पंजाब में, स्थानीय निकाय चुनावों में, भाजपा को 2364 सीटों में से केवल 47 सीटें मिलीं यानि मात्र 2 प्रतिशत। दिल्ली जहां भाजपा मजबूत है निगम के उप–चुनाव में उसे केवल 27प्रतिशत वोट मिले।

किसानों और मजदूरों दोनों के तीव्र संघर्षों के संदर्भ में, भाजपा और मोदी सरकार का नेतृत्व चार श्रम संहिताओ और तीन कृषि अधिनियमों को लागू करने में असमर्थ होने के गंभीर संकट का सामना कर रहा हैं। चूंकि भाजपा अपने गढ़ रहे क्षेत्रों में भी लोगों का समर्थन खो रही है, इसलिए मोदी सरकार लोगों के दबाव के प्रति थोड़ी नरम हो गई है। रासायनिक उर्वरकों की पहले से घोषित मूल्य वृद्धि को मजबूरन वापस लेना इस का ही एक उदाहरण है जिसने सरकार के राजनीतिक संकट को उजागर किया है। जैसे ही निकट भविष्य में मजदूर और किसान अपने संघर्ष को तेज करेगे; भाजपा की भी कांग्रेस जैसी दुर्दशा होगी और वो लोगों का समर्थन खो देगी। □

मैं घास हूँ - मैं आपके हर किए-धरे पर उग आऊंगा

—मनोज कुमार

जिस घास का ज़िक्र अवतार सिंह पाश ने चार दशक पहले किया था, आज वो राजधानी के चारो ओर नज़र आ रही है— साथ ही मुल्क के हर हिस्से से इस घास के जमने की खबरे सुनाई दे रही है। देश एक ऐसे आन्दोलन का गवाह बना जिस के बारे में शायद चंद महीनों पहले सोचना भी मुश्किल था। हज़ारों किसान अपने गावों से चल कर राज्य की सत्ता द्वारा पैदा की गई तमाम मुश्किलों को बौना दिखाते हुए देश की राजधानी की सरहद पर आ पहुँचे और आपनी खेती व जीवन को बचाने की लड़ाई में केंद्र सरकार द्वारा लाए गए किसान विरोधी और खेती के लिए विध्वंसक कानूनों के खिलाफ सरकार को चुनौती दे दी। एक लम्बें अरसे बाद, आजाद भारत में शायद पहली बार किसानो के ऐसे तीखे आन्दोलन को देश देख रहा था। पर जनविरोधी केंद्र की मोदी सरकार आपने हठधर्मिता छोड़ने को तैयार नहीं हुई और अपने अधिनायकवादी, जनतंत्र विरोधी चरित्र के अनुरूप, उलटे आन्दोलन को बदनाम करने के लिए नए—नए हथकंडे अपनाने में लगी। शासक वर्ग के इन प्रयासों से आन्दोलन को काफी नुकसान भी पहुँचा लेकिन वो किसानो की एकता और दृढ़ता तोड़ पाने में नाकामयाब रहे और आन्दोलन अपना विश्वाश बनाएं हुए है। इस आन्दोलन की सबसे बड़ी खूबसूरती इस का सर्वसमावेशी होना है। हर वर्ग, पंथ, क्षेत्र और हिस्सों से किसान इस आन्दोलन का हिस्सा है, बड़ी संख्या में महिलाएं इसमें शामिल है और किसान आन्दोलन को लेकर बनाएं गए तमाम ढर्रो के विपरीत बड़ी सख्यां में नौजवान किसान इस आन्दोलन का अभिन्न अंग व चेहरा है।

जैसे ही मोदी सरकार ने अपने कॉर्पोरेट दोस्तों को खुश करने के लिए अध्यादेश के ज़रिये खेती के लिए विनाशकारी तीन कानूनों को लागू किया, उन राज्यों में जहा मंडीकरण बेहतर है किसानो द्वारा इनका तीवर विरोध शुरू हो गया। इस के बावजूद भाजपा द्वारा संवैधानिक मरियादाओं को ताक पर रख राज्यसभा में इन कानूनों को पारित करा किसानो पर थोप दिया। जिस के बाद राज्य स्तर पर आन्दोलन के बाद किसानो द्वारा "दिल्ली चलो" नारे के साथ दिल्ली कूच शुरू हुआ। तब से लेकर अब तक इस आन्दोलन के नेतृत्व, प्रबंधन, प्रचार और विस्तार में नौजवानों की बड़ी भूमिका रही है। हर स्तर के कामो में वो मौजूद है, लंगर में खाना खिलाने या सफाई व्यवस्था बनाने से लेकर मंच संचालन तक के कामो में नौजवानो की भागेदारी प्रत्यक्ष रूप से देखी जा सकती है। नौजवान स्वयंसेवाक (वालेंटीर्स) उमरदराज किसान साथियों की मदद करते हुए, उन के लिए चीजे आसान बनाते हुए इन धरना स्थलों पर आराम से नजर आ जाएगे। दिल्ली चलो की शुरूवाती तस्वीरो में जब किसानो के जत्थो की बेरीगेट तोड़ कर पानी की बोछारे झेलते हुए आगे बढ़ने के दृश्य नजर आ रहे थे, उन्ही में एक तस्वीर कई जगह नजर आई जिस में एक नौजवान वाटर—केनन(पानी फेकने वाला वाहन) के ऊपर चढ़ कर पानी की बोछारे बंद कर रहा था। यह नौजवान अम्बाला जिले का 26 वर्षीया नवदीप सिंह था जिसने पूरी हिम्मत से जान पर खेल कर अपने साथियों को पानी की तेज धार से बचाया था। तमाम नाको पर अगली कतारों में नौजवान किसानों ने बाधाओं को ध्वस्त करते हुए

पूरे जत्थे के लिए रास्ते बनाए। साथ ही आपनी सूझ बूझ से सरकार की चालों को समझते हुए किसानों की एकजुटता को कायम रखते हुए दिल्ली की सरहदों पर डेरे डाले।

जब कॉर्पोरेटपरस्त मीडिया ने किसान आन्दोलन की खबरों को दबाना और असल बातों को तोड़ मरोड़ कर पेश करते हुए आन्दोलन को बदनाम करने की कोशिश की तो युवाओं ने ही इस मोर्चे को संभाला। शोशल मीडिया मंचो का इस्तेमाल करते हुए किसानों के पक्ष को देश के हर आदमी तक पहुँचने की कमान युवाओं की टीम ने सभाली, जिस में उन्हें बड़ी सफलता मिली और गोदी मीडिया के हमलों के विरुद्ध आन्दोलन की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ी। आन्दोलनरत किसानों के पक्ष को और बॉर्डरों पर घट रही घटनाओं की जानकारी उन किसानों तक भी पहुँचाने का काम किया गया जो गावों में बैठें है। इस सफल प्रचार अभियान का नतीजा ही था की आन्दोलन को व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन मिलने लगा और बौखालाई मोदी सरकार ने आनन–फानन में 22 वर्षीय पर्यावरण कार्यकर्ता दिशा रवि को गिरफ्तार कर लिया जिस के लिए बाद में सरकार को कोर्ट द्वारा झिड़की भी लगाई गई। इस से पहले मुखरता के साथ मोदी सरकार के विरुद्ध लिखते रहे स्वतंत्र पत्रकार मनदीप पुनिया को भी दिल्ली पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था। सिंघु बोर्डर के करीब ही मजदूरों–किसानों की लड़ाई लड़ रही 24 वर्षीया नौदीप कौर को हरियाणा पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया व भयकंर यातनाएं दी गई, जिसमें यौन हिंसा भी शामिल है। साथ ही मजदूरों, किसानों की लड़ाई में सक्रिय शिव कुमार को भी हरियाणा पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया था। आन्दोलन की शुरूआत से अब तक जो गिरफ्तारियां हुई है उन में युवा कार्यकर्त्ता एक अच्छी संख्या में शामिल रहे हैं। न सिर्फ दिल्ली बॉर्डरों पर बल्कि हिंदुस्तान के हर कोने में जहां भी इस आन्दोलन के लिए गिरफ्तारियां हुई है वहा नौजवान उस में भी आगे रहे है। किसान संगठनों के अलावा नौजवानों के स्वतंत्र संगठनो ने भी इस किसान आन्दोलन को समर्थन दिया व उन के कार्यकर्ता भी गिरफ्तारियां में साथ रहे।।

इस दौरान बॉर्डरों पर 26 फरवरी और 23 मार्च, भगत सिंह शहीदी दिवस पर युवा किसान दिवस मनाया गया और मंच संचालन से लेकर अन्य सभी नेतृत्वकारी भूमिका भी युवाओं द्वारा ही निभाई गई। देश के कई हिस्सों से बहुत से नौजवान अपने खून से ख़त लिख कर प्रधान मंत्री जी को भेज रहे है तो कहीं से अनशन–भूख हड़ताल पर बैठने की खबर सुनाई पड़ रही है। इस आन्दोलन की एक खूबी यह भी है कि, इस में एक अच्छी संख्या में महिलाएं भी शामिल हैं और ना सिर्फ उमरदराज बल्कि नवयुवतियां भी इस आन्दोलन का अभिन्न अंग है और हर तरह के कामो में लगी हुई है। वो लोगों का नेतृत्व करना हो या पुलिस की बाधाओं का सामना करना, हर जगह नौजवान लडकिया अपनी जिम्मेदारी निभा रही है। जो की ये साफ करता है कि ये ऊर्जावान नवयुवतिया ना सिर्फ आधी धरती और आधे आकाश पर अपना दावा ठोकती हैं बल्कि अपने अधिकारों की लड़ाई में भी वो बढ़–चढ़ कर कुर्बानियां करने को तैयार हैं।

इस अभूतपूर्व आन्दोलन में रंगत और बॉर्डरों पर जशन से माहौल का श्रेय निश्चित तौर पर उस युवा पीढ़ी को जाता है जो जोश और उम्मीद से भरी हुई है। धरना स्थलों पर इंकलाबी गीतों के स्वर, डफली–ढोल की थाप में आप को इस जोश की आवाज सुनाई दे जाती है। मीलो लम्बें किसानो के पड़व के बीच–बीच में नाटक दिखाते, नारे लगाते, कविताएँ सुनते ये नवयुवक– युवतियां इस आन्दोलन में फिजां बनाएं हुए है। जहा भी सभव हुआ रंग बिरंगे रंगों से इंकलाबी नारे और चित्र उकेर दिए गए है। यह नए–नए कलात्मक तरीकों से अपनी मांग व मुद्दों को दर्शा रहे हैं। देश के हर हिस्से से नौजवान इन बॉर्डरों पर पहुँचे और अपने अपने भिन्न–भिन्न तरिकों से इस आन्दोलन में योगदान दे रहे है। अच्छी संख्या में युवा स्वास्थ्य कर्मी इस आन्दोलन के मोर्चो पर अपने आन्दोलनकारी साथियों की हर संभव मदद के लिए मुस्तेदी से मौजूद है। बॉर्डरों के पड़ाव स्थलों पर पुस्तकालय चलाना, पुस्तक व पर्चा बांटना, दीवार पत्रिका निकलना, अख़बार निकालना आदि साहित्यिक कार्यो में भी नौजवान कार्यकर्ताओं का एक हिस्सा लगा हुआ है। हिदुस्तान के दक्षिणतम राज्यों तमिलनाडू और केरल के नौजवान भी किसानों की लड़ाई में साथ देने पहुँचे, केरल के युवा कलाकारों के दल ने अपनी सुरीली प्रस्तुति बॉर्डरों पर बैठे किसानों के समक्ष पेश की। बंगाल से आए युवा शिल्पकारों के अपनी कला के माध्यम से धरना स्थलों पर किसानों के प्रति अपना आभार और उनके संघर्षो के प्रति अपनी एकजुटता दिखाई। कश्मीर और उत्तर पूर्वी राज्यों से भी युवाओं ने दिल्ली में किसानों के पड़ाओ में शिरकत की और इस संघर्ष के प्रति अपना समर्थन दिखाया।

युवाओं के बारे में जहां ये कहा जाता है कि वें अनुशासन के दायरों में रह कर काम नहीं कर सकते वहीं इस आन्दोलन में उन्होंने इस धारणा को भी गलत साबित किया है। इतने बड़े जमावड़े के बीच पूरी जिम्मेदारी के साथ अपने कर्तव्यों को निभा रहे है, कतारबद्ध हो नारे लगाते, अपने

किसान साथियों को खाना खिलाते, सभा में बैठ घंटों नेताओ और अतिथियों की बाते सुनते, गन्दगी को हटाते, सफाई करते, ट्रोलियों व अपने अस्थाई घरों की सुरक्षा करते और सड़क पर चल रही गाडियों के ट्रैफिक को व्यवस्थित करते, इन नौजवानों को धरना स्थलों पर देख सकते हैं। जिम्मेदारी और लगन के साथ अपने कामों को निपटाते हुए शांति बनाए रखने के उन के आचरण से ही स्थानीय निवासियों के बीच वो उन के लिए भरोसा बनाने में कामयाब हो पाए हैं।

एक और मोर्चे का यहाँ जिक्र किये जाने की जरुरत है जो की आन्दोलन के लिए बहुत ही अहम है, "आर्थिक मोर्चा" जो की किसी भी आन्दोलन की रीढ़ है और इस में भी युवाओं ने अपनी जिम्मेदारियों को निभाया है। इस आन्दोलन में शामिल सभी संगठनों को जो आर्थिक मदद आई है उस में मदद देने वालो और मदद इकठ्ठा करने वालो में अच्छी संख्य में नौजवान ही है। अलग–अलग राज्य देश–विदेश में बैठे युवा जो शारीरिक रूप से इस आन्दोलन का हिस्सा नहीं बन पाए उन्हों ने आर्थिक सहयोग दे कर इस आन्दोलन के प्रति अपना समर्थन दिखाया। इस के साथ ही स्थनीय स्तर पर लोगों से आन्दोलन के लिए मदद एकत्रित करने का भी किया गया। स्कूलों व कॉलेजों के छात्रों द्वारा गावों से आन्दोलन के लिए संसाधन जुटा कर दिल्ली में धर्नास्थालो को पंहुचने के कई किस्से इस दौरान सुनने में आए। पूरे आन्दोलन के लिए संसाधन जुटाने के कम में नौजवानों की सराहनीय भूमिका रही है।

निश्चित तौर पर यह सच्चाई है कि युवा पीढ़ी के बड़े हिस्से को कृषि पेशे के तौर पर अपनाने में संकोच है, जो की कृषि पर बढती लागत और घटती आमदनी व क़र्ज़ में डूबे किसानों को देखते हुए स्वाभाविक भी है। पर लगतार बढ़ते निजीकरण और निजी मल्कियत वाले उद्योगों में काम कर रहे कर्मचारियों के शोषण ने अपनी ज़मीन के प्रति मोह को बढ़ाया है। साथ ही ज़मीन से जुड़े रिश्तो और ज़मीन से उपजी संस्कृति के साथ जुड़ाव को छोड़ पाना भी किसानी परिवारों से आए लोगों के लिए मुश्किल है। यही कारण है कि अलग–अलग व्यवसाय से जुड़े, नौकरियों, व्यपार में लगे हुए लोग भी इस आन्दोलन में ना सिर्फ देश बल्कि विदेशो से भी अपना योगदान देने आ गए। आन्दोलन से जुड़े तमाम तरह के कामों में युवाओं की भागीदारी से ही इस आन्दोलन को अतिरिक्त उर्जा मिल पाई है। छात्रों की भी बड़ी संख्या आन्दोलन स्थलों पर आप को दिख जाएगी जो अलग–अलग स्कूलों, कॉलेजों एवं विश्वविधयालयों में पढ़ते हैं और अपनी पढाई के साथ इस आन्दोलन का भी हिस्सा है। हाल ही में किसान सभा द्वार तीन दिशाओं से धरना स्थलों तक की गई पदयात्राओ में भी भारत की जनवादी नौजवान सभा के साथियों की अच्छी उपस्थिति थी। वो अपने झंडों और बेनरों के साथ पदयात्रा की शुरूआत से अंत तक शामिल रहे। युवा इस आन्दोलन में महज़ दर्शक के तौर पर नहीं है बल्कि पूरे आन्दोलन का हिस्सा है, कई जगहों पर वो नेतृत्वकारी भूमिकाओं में भी है, ना सिर्फ दिल्ली बल्कि देश भर में इस आन्दोलन की कड़ी में चल रहे कार्यक्रमों में उनकी भूमिकाये है व आन्दोलन को मजबूत करने व इसका विस्तार करने में भी ये साथी अपनी सक्रीय हिस्सेदारी कर रहे है।

इस आन्दोलन ने कई धारणाओं को तोडा और एक सुन्दर लोकतंत्र के सृजन के कार्य को आगे बढ़ाया है। जिसमें आने वाली पीढ़ी ने भी अपनी स्वेच्छिक भागेदारी की है। ये नौजवान आँखों में हज़ारो सपने लिए अपने लिए एक बेहतर मुल्क और बेहतर दुनिया बनाने की अपनी ज़िद के साथ जी–जान से इस संघर्ष को सफलता की ओर बढ़ने में लगे हुए है। इन जोशीले युवाओ को देख दिमाग में भगत सिंह का रेखाचित्र उभर आता है और दिल को एक राहत मिलती है कि रात कितनी भी घनी क्यों ना हो, हर रात की सुबह तो होती ही है। □

26 जनवरी किसान ट्रैक्टर परेड

18 फरवरी 2021 रेल रोको

हरियाणा के हांसी की लाल सड़क से किसान-मजदूर पदयात्रा की शुरुआत, जो टिकरी बॉर्डर तक पहुंची

हांसी से शुरू हुई किसान-मजदूर पदयात्रा का टिकरी बॉर्डर पर आगमन

भगत सिंह के पैतृक गांव खटकड़कला से किसान-मजदूर जत्थे को झंडा दिखाकर रवाना करते हुए। जिसने आगे पदयात्रा का रूप लिया और सिंघु बॉर्डर पहुंचा

मथुरा से शुरू होकर पलवल धरना स्थल तक गई किसान-मजदूर पदयात्रा का ग्रामीणों द्वारा स्वागत

लेबर कोड्स में प्रवासी मज़दूरों के लिए निराशा के सिवा कुछ नहीं

-विक्रम सिंह

प्रवासी मज़दूरों का जीवन घोर अनियमिताओं से घिरा होता है। अपने स्थानीय गांव में काम न मिलने के कारण मजबूरीवश यह लोग अपरिचित गन्तवों की तरफ निकल जाते हैं, मन में कई आशाएं लिए। घर से निकलने के साथ ही शुरू होती है अनिश्चिता और असुरक्षा की लम्बी श्रृंखला । कहां काम मिलेगा, रहने के लिए बसेरा होगा कि नहीं, काम कैसा होगा, मज़दूरी क्या होगी और कार्यस्थल का माहौल कैसा होगा– यह आधारभूत प्रश्न है जिनका उत्तर प्रवासी मज़दूरों को कभी नहीं मिलता क्योंकि ज्यादातर प्रवासी मज़दूर असगठित क्षेत्र में अस्थाई तौर पर काम करते है और उनके जीवन में उपरोक्त प्रश्न लगातार बने रहते हैं।

इस अनिश्चिता और घोर बेरोजगारी के कारण प्रवासी मज़दूर अपने मालिक के साथ मज़दूरी के बारे में किसी भी तरह का मोलभाव करने की स्थिति में नहीं होते। सामान्यतः इनके श्रम का उचित दाम इनको नहीं मिलता और संगठित होने के अवसर भी न के बराबर होते हैं। इस स्थिति में, कामगारों के इस बड़े हिस्से के हकों की कानूनी रक्षा करना बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाता है। सरकार की जिम्मेदारी है कि निश्चित व ठोस कानून बनाकर और इसे सख्ती से लागू करवाकर प्रवासी मज़दूरों के हकों की रक्षा करे।

इन दिनों पूरे देश में मज़दूरों के कानूनों पर चर्चा चल रही है, मुख्य कारण है केन्द्र सरकार द्वारा 29 श्रम कानूनों को श्रम सहिताओं (लेबर कोडस) में बदलना। इसके बारे में काफी कुछ लिखा जा चुका है और अब तक यह स्पष्ट हो गया है कि यह पूरी प्रक्रिया श्रम कानूनों को कम्ज़ोर करते हुए मज़दूरों के जीवन को बाजार के हवाले करने की ही कवायत है जिससे कॉर्पोरेट्स को मजदूरों के श्रम का शोषण कर अनाप मुनाफा कमाने की खुली छूट मिल जाएगी। मज़दूरों के सतत और उग्र आन्दोलन के कारण केन्द्र सरकार को लेबर कोड्स को लागू करने की प्रक्रिया पर रोक लगाने के लिए मज़बूर होना पड़ा,परन्तु खतरा टला नहीं। यह एक अस्थाई राहत है और इन कोड्स को वापिस करवाने तक संघर्ष जारी रखना होगा । लेकिन प्रवासी मज़दूर और उनके लिए श्रम कानून पूरी चर्चा से ही लगभग गायब रहे। हाँ यदा–कदा उनका संदर्भ जरूर आता है, जिसका मुख्य कारण देश की जनता के पिछले वर्ष लॉकडाउन के समय के अनुभव हैं जब करोड़ों प्रवासी मज़दूरो सड़कों पर जीवित रहने और अपने घरों तक पहुंचने के लिए संघर्ष करते दिखे गए। संघर्ष की ऐसी असंख्य कहानियों ने देश की आत्मा में बचीखुची मानवता को झझोड कर रख दिया व पहली बार प्रवासी मजदूरों के प्रति जनता की सहनभूति दिखी अन्यथा तो हमारा मध्यमवर्ग इन्हें एक समस्या ही समझता आया है। खैर यहां हम बात कर रहे हैं प्रवासी मजदूरों के लिए पहले से उपलब्ध कानूनों के बारे में और वर्तमान श्रम संहितायों में उनके लिए सुरक्षा के प्रश्न पर। प्रवासी मज़दूरों के लिए 1979 में अन्तेरराज्यिउक प्रवासी कर्मकार (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम बनाया गया था। तमाम कमियों के बावजूद यह एक अच्छा कानून था जिसमें प्रवासी मज़दूरों के लिए कई तरह से प्रावधान थे। हालाकि इन कानून को सही से कभी लागू नहीं किया गया। अधिकतर मज़दूरों को तो इसके बारे में पता ही नहीं है। प्रवासी मज़दूरों को काम पर रखने वाले ठेकेदारों और प्रधान नियोजकों से तो आशा की नहीं जा सकती, इनको लागू करने की मुख्य जिम्मेदारी थी सरकारों और एक के बाद एक बनी सरकारों ने भी इसकी जहमत नहीं उठाई।

तालाबंदी के कटु और अमानवीय अनुभव के बाद सभी आशा कर रहे थे कि सरकार प्रवासी मज़दूरों के लिए ठोस कानून बनाएगी जिससे उनके हालात में कुछ सुधार हो सके परन्तु भाजपा की केंद्र सरकार ने तो इसके विपरीत जाते हुए पहले से मौजूद कानून को भी लगभग ख़त्म कर दिया है।कहने को तो अन्तिरराज्यि क प्रवासी कर्मकार (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम, 1979 को लेबर कोड्स में मिला दिया गया है परन्तु असल में इसे कमज़ोर ही किया गया है। वर्तमान में प्रवासी मज़दूर व्यावसायिक सुरक्षा, स्वाज़स्यार और कार्यस्थल स्थिति कोड और सोशल सिक्योरिटी कोड में आते है। प्रवासी मज़दूरों के बारे में प्रावधान व्यावसायिक सुरक्षा, स्वा स्थ्यि और कार्यस्थदल स्थिति कोड के अध्याय 2 का भाग II में है।

सबसे पहले तो समझने की जरूरत है कि उपरोक्त दोनों कोड्स राज्यान्तरिक (राज्य के भीतर ही एक जगह से दूसरी जगह) प्रवासी मज़दूरों पर लागू नहीं है। हालाँकि पिछले कानून अन्तगरराज्यिीक प्रवासी कर्मकार (नियोजन का विनियमन और सेवा शर्त) अधिनियम में प्रदेश की सीमायों के भीतर प्रवास करने वाले मज़दूर शामिल नहीं थे परन्तु यह एक मौका था हमारी सरकार के पास जब प्रवासी मज़दूरों के इस बड़े हिस्से को कानून के दायरे में लाया जाता जो उसने बड़ी ही सुगमता से गवा दिया। या यूँ कहें कि अंतरराज्यीय प्रवासी मज़दूरों से मौका छीन लिया। राज्यान्तरिक प्रवासी मज़दूरों की समस्याएं अन्त्रराज्यिरक प्रवासी मज़दूरों से कतई कम नहीं है। वर्ष 2011 के जनगणना के आंकड़ों के अनुसार प्रवास करने वाले कुल मज़दूरों का 88 प्रतिशत हिस्सा एक ही राज्य में अपने पैतृक गांव से दूसरी जगह पर काम करने वाले मज़दूरों का है। मतलब अधिकतम मज़दूरों को आपने क़ानून से वंचित कर दिया।

वर्तमान कोड्स में प्रवासी मज़दूरों की परिभाषा में बदलाव किया गया है जिससे इसका दायरा कुछ बढ़ने की आशा है। पहले केवल ठेकेदारों के साथ या सीधे प्रधान नियोजक के पास काम करने वाले मज़दूर ही प्रवासी मज़दूरों के कानून के दायरे में आते थे परन्तु अब स्वतंत्र तौर पर काम करने के लिए दूसरे प्रदेशो में जाने वाले मज़दूर भी इस दायरे में आते है। परन्तु यह दायरा अगले प्रावधान से बिलकुल सिकुड़ जाता है। व्यावसायिक सुरक्षा, स्वा्स्दू और कार्यस्थल स्थिति कोड के अनुसार यह उन प्रतिष्ठानों पर ही लागू होगा जहाँ मज़दूरों की न्यूनतम संख्या 10 होगी। दरअसल यह न्यूनतम सीमा दोगुनी कर दी गई है क्योंकि इससे पहले कानून में मज़दूरों की यह संख्या 5 थी। छठी आर्थिक जनगणना (वर्ष 2013 – 2014) के अनुसार भारत में 70 प्रतिशत प्रतिष्ठान 6 से कम श्रमिकों को रोजगार देते हैं। यह इकलौता प्रावधान छोटे (यहाँ दस से कम संख्या में मज़दूर है) प्रतिष्ठानों में काम करने वाले लाखों प्रवासी मज़दूरों को अनिवार्य रूप से श्रम कानूनों के लाभ से वंचित कर देगा। प्रवासी मज़दूरों को लाभ के मामले में ये दोनों प्रावधान लगभग एक दूसरे को नकारते हैं।

पहले के कानून में ठेकेदारों और प्रधान नियोक्ता पर प्रवासी मज़दूरन के पंजीकरण और उनसे जुड़ी जानकारी विभाग को देने की जिम्मेवारी दी गई थी। प्रवासी मजदूरों को फोटो लगी हुई पासबुक देना उनकी अनिवार्य जिम्मेवारी थी। लेकिन वर्तमान कोड्स में ऐसा कुछ भी नहीं है। किसी की भी जिम्मेवारी सुनिश्चित नहीं की। ऐसा लगता है कि यह राज्य सरकारों के हिस्से आएगा और मज़दूर खुद भी ऑनलाइन पंजीकरण कर सकते है। यह अजीब स्तिथि है जब हमने ठेकेदार और मालिक को तो जिम्मेवारी से मुक्त ही कर दिया है लेकिन हम आशा कर रहें है कि गरीब प्रवासी मज़दूर जिससे ढंग से अंग्रेजी और हिंदी पढ़ना नहीं आता, जिनके पास स्मार्ट फ़ोन और इंटरनेट कनेक्टिविटी नहीं है उनसे सरकार आशा कर रही है कि वह मज़दूर खुद अपना पंजीकरण करेंगे। परिणाम स्वरुप अधिकतर मज़दूर पंजीकरण करवाते ही नहीं है। यह स्तिथि उनके प्रतिष्ठान के मालिकों और ठेकेदारों के लिए ज्यादा सुखद है।

प्रवासी मज़दूरों का रिकॉर्ड न होने के पैदा हुई भयानक स्थिति हम हाल ही में देख चुके है जब तालाबंदी और उसके बाद के समय में प्रवासी मज़दूरों के बारे में ठोस आंकड़े न होने के चलते राज्य और केंद्र सरकारे कैसे मूक दर्शन बनी रह गई और प्रवासी मजदूरों को जीवन की जंग लड़ते हुए देखते रही। यहाँ तक कि देश के संसद में मंत्री जी ने बड़ी वेशर्मी से स्वीकार किया की सरकार के पास तालाबंदी के दौरान मरने वाले प्रवासी मज़दूरन का रिकॉर्ड नहीं है। जब ठोस रिकॉर्ड ही नहीं तो काहे की योजना और मज़दूरों की भलाई के कार्यक्रम। इसलिए पंजीकरण और प्रवासी मजदूरों का हिसाब रखने व्यवस्था सुनश्चित करने में विफलता इन कोड्स की एक बेहद महत्वपूर्ण कड़ी हैं।

प्रवासी मज़दूरों के लिए यह श्रम कानून ग्रामीण भारत में कृषि में काम करने वाले करोडों खेत मज़दूरों के लिए लागू नहीं होते है। यह बताने की तो आवश्यकता नहीं है कि हमारे देश में खेत मज़दूरों का एक बड़ा हिस्सा देश के दूसरे राज्यों में जाकर काम करता है जो आर्थिक और सामाजिक शोषण का शिकार होता है। असल में ज्यादातर प्रवासी खेत मज़दूर तो आधुनिक बंधवा मज़दूरों की तरह काम करते है जो बोलने के लिए आज़ाद है परन्तु एक बार खेत पर पहुँचाने के बाद उनको अपने मालिक के अनुसार ही काम करना पड़ता है। अन्यथा पैसे न होने की वजह से न तो वह अपने घर वापिस जा सकते हैं और न ही दूसरे मालिक उनको काम देते हैं। ज्यादातर मामलों में पूरा परिवार ही एक मिल्क के लिए काम करता है। उनको दिहाड़ी केवल खेती के काम की मिलती है इसके अतिरिक्त मालिक के घर और पशुओं का काम बिना मज़दूरी के बेगार की तरह ही करना पड़ता। वैसे तो देश में कुल 14 करोड़ से ज्यादा खेत मज़दूर बिना किसी कानूनी सरक्षण के काम कर रहें हैं। उनको न तो किसान समझा जाता है और न ही मज़दूर के तौर पर कोई क़ानूनी पहचान है।

ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे देश के राजनेता और नीति निर्धारकों को देश का ज्ञान ही नहीं है, इसी का परिचायक है प्रवासी मज़दूरों के लिए लेबर कोड्स में प्रावधान जिससे जो प्रवासी मज़दूरों के कार्य स्थल की विविधता, उनके काम की विविधता, उनके सामने पेश आने वाली विराट चुनौतियों का संज्ञान लेने में असफल रहीं है। दरअसल प्रवासी मज़दूरों के लिए एक अलग से कानून की आवश्यकता है। लेकिन हम तो मोदी युग में रह रहे हैं यहाँ उनको केवल दिखावे के लिए नीति बनानी है। मकसद है मज़दूरों को भ्रमित कर यह दिखाने का कि, जनाब और उनकी सरकार मज़दूर हितेषी है। प्रवासी मज़दूरों के बारे में तो यह ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि लॉकडाउन के बाद हुई दुर्दशा के बाद प्रवासी मज़दूरों का सामना भाजपा के नेता नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए प्रचार के लिए तो कानून बनाये गए है लेकिन है केवल नाम के लिए। इससे न दो देश के मज़दूर गफलत में रहेंगे और न ही प्रवासी मज़दूर। किसानों और मज़दूरन के संगठित और ऐतिहासिक आंदोलन ने जनता के मन बड़ी आशा बंधाई है, प्रवासी मज़दूरों की आँखों में आशा झलक रही है कि अब उनकी मेहनत को भी उचित दाम और पहचान मिलेगी। मालिक मर्जी के अनुसार मशीन की तरह उनको मनमर्जी तरीके से काम से नहीं निकालेंगे। लेबर कोड्स तो इन उम्मीदों को पहचानने में भी असफल है इसलिए इनको वापिस जाना होगा और प्रवासी मज़दूरों के लिए अलग से कणों लाना होगा। □

बिजली (संशोधन) विधेयक, 2020 से किसानों पर 1 लाख करोड़ रु0 का बोझ पड़ेगा

–तेजल कानिटकर

इस दांत किटकिटाने वाली सर्दी में लाखों की तादाद में किसान, तीन कृषि कानूनों के खिलाफ आंदोलन कर रहे हैं। इन कृषि कानूनों के साथ-साथ ये किसान, बिजली (संशोधन) विधेयक, 2020 को भी वापस लिए जाने की मांग कर रहे हैं। अगर यह विधेयक पारित हो जाता है, इससे किसानों पर 1 लाख करोड़ रु0 का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा और उनकी सिंचाई की लागत में 500 फीसद की बढ़ोतरी हो जाएगी।

किसानों और गरीबों पर ही पड़ेगा भारी बोझ

प्रस्तावित संशोधन, सारी की सारी क्रास-सब्सीडियां खत्म कर देगा और उपभोक्ताओं से आपूर्ति की पूरी की पूरी या **वास्तविक कीमत** या इस संशोधन की ही शब्दावली का प्रयोग करें तो **उपभोक्ताओं की सेवा करने की कीमत** पूरी की पूरी वसूल करेगा। अभी तक यह व्यवस्था चली आ रही थी कि अधिक साधनसंपन्न उपभोक्ता से ज्यादा कीमत वसूल की जाए, जिसके सहारे गरीबों को तथा ग्रामीण उपभोक्ताओं को, अपेक्षाकृत कम दाम पर बिजली दी जा सके। इसी तरह की व्यवस्था को क्रास सब्सीडी की व्यवस्था कहते हैं। लेकिन, प्रस्तावित संशोधन के लागू होने पर, किसानों तथा ग्रामीण उपभोक्ताओं को ही बिजली के सबसे ज्यादा दाम देने पड़ेंगे क्योंकि ग्रामीण इलाकों में बिजली की आपूर्ति की लागत, शहरी उपभोक्ताओं के लिए बिजली की आपूर्ति की लागत से उल्लेखनीय रूप से ज्यादा बैठेगी। और इसका अंदाजा लगाना तो जरा भी मुश्किल नहीं होगा कि इस नयी व्यवस्था में सबसे सस्ती दर पर बिजली किसे मिलेगी—उन्हीं बड़े उद्योगों को तथा संपन्न उपभोक्ताओं को, जो अब तक गरीबों तथा ग्रामीण उपभोक्ताओं के बिजली के खर्च को एक हद तक सब्सीडाइज करते आ रहे थे।

कहने की जरूरत नहीं है कि हम, 1948 के बिजली कानून के पीछे, डा0 आंबेडकर की जो संकल्पना थी, उससे बहुत दूर चले आए हैं। आंबेडकर की संकल्पना यह थी कि बिजली को, जनता के लिए एक बुनियादी जरूरत के तौर पर देखा जाना चाहिए और इसी नजरिए से समूची जनता के लिए इसकी आपूर्ति की जानी चाहिए, न कि मुनाफा कमाने के लिए एक माल के रूप में। डा0 आंबेडकर अच्छी तरह से समझते थे कि अगर वाणिज्यिक सिद्धांत का इस्तेमाल किया जाता है, तो ऊंची दरों का बोझ ठीक उन्हीं तबकों पर पड़ेगा, जो उसका बोझ उठाने के लिए सबसे कमजोर स्थिति में हैं—हमारे गांवों तथा दूर-दराज के इलाकों में रहने वाले लोगों पर।

1990 के दशक से शुरू हुई उल्टी यात्रा

बहरहाल, 2003 से हमारे देश में बिजली को बाकी सभी मालों की तरह, एक और माल में तब्दील करने की शुरूआत हो गयी। अब मोदी सरकार के प्रस्तावित संशोधन के जरिए, बिजली क्षेत्र के संबंध में आंबेडकर की संकल्पना को पूरी तरह से ही दफ़्न कर दिया जाएगा। मोदी युग का एक ही मंत्र है, सब कुछ 'बाजार संचालित' होना चाहिए, जिसमें पूंजीपतियों के लिए मुनाफे सुनिश्चित हों। उसे इससे फर्क नहीं पड़ता है कि यह साबित हो चुका है कि बिजली जैसे आवश्यक बुनियादी ढांचे के मामले में इस तरह का बाजार तत्ववाद, काम नहीं करता है।

ये कृषि कानून किसानों के लिए तो बुरे हैं ही, उन्हें संवैधानिक पहलू से एक दुस्साहस ही कहा जाएगा क्योंकि ये कानून बनाकर केंद्र सरकार ने एक ऐसे क्षेत्र में घुसपैठ की है, जो बुनियादी तौर पर राज्यों का विषय है। बहरहाल, जहां तक बिजली क्षेत्र का सवाल है, जोकि समवर्ती सूची के विषयों में आता है, इस तरह के अतिक्रमणों का एक लंबा इतिहास है। 1990 के दशक से ही केंद्र सरकार ने जो भी कथित 'सुधार' किए हैं, न सिर्फ गरीबों की कीमत पर, बड़ी पूंजी तथा अमीरों के हित में काम करते रहे हैं बल्कि केंद्र की नीतियों के वित्तीय तथा राजनीतिक दुष्परिणाम, राज्य सरकारों के ही सिर पर डालते आए हैं। इन सुधारों के फलस्वरूप अधिकांश बिजली उत्पादन या तो निजी क्षेत्र के हाथों में चला गया है या फिर एनटीपीसी जैसी केंद्रीय उपयोगिताओं के हाथों में रह गया है, जबकि बिजली का वितरण राज्यों के कंधों पर डाल दिया गया है। एनरॉन तजुर्बे के जमाने से ही केंद्र सरकार द्वारा बिजली की जो बढ़ी हुई दरें थोपी जा रही हैं, उनका बोझ राज्य सरकारों का ही उठाना पड़ रहा है क्योंकि वे बिजली की इन बढ़ी हुई दरों का बोझ उपभोक्ताओं पर तो डाल नहीं सकती हैं, जिनमें किसान भी शामिल हैं।

अब गरीब उपभोक्ताओं तथा खेती के लिए मुहैया करायी जाने वाली सब्सीडियों में से ज्यादा बड़ा हिस्सा या बिजली क्षेत्र में दी जाने वाली कुल सब्सीडी का 55 फीसद हिस्सा तो, क्रास

सब्सीडियों के जरिए ही आता है। सब्सीडी का बाकी बचा हुआ हिस्सा राज्य सरकारों द्वारा प्रत्यक्ष सब्सीडी के रूप में बिजली वितरण कंपनियों या डिस्कॉम्स को हस्तांतरित कर दिया जाता है। अगर ये क्रास-सब्सीडियां रातों-रात हटा दी जाती हैं और इसका बोझ राज्य सरकारों को ही उठाना पड़ता है, तब तो इससे राज्यों पर बहुत भारी अतिरिक्त बोझ पड़ेगा जिसे उठाना उनके लिए मुश्किल होगा। इसलिए, उचित ही अनेक राज्य सरकारों ने इस विधेयक का विरोध किया है।

बिजली सब्सीडियों के खात्मे का एजेंडा

बिजली उत्पादन की ऊंची लागत के मुद्दे से निपटने के बजाए, मोदी सरकार का आग्रह यह है कि बिजली वितरण में लगी उपयोगिताओं का ही निजीकरण कर दिया जाए। लेकिन, उसकी नजरों में क्रास-सब्सीडियों की व्यवस्था ही इसके रास्ते में सबसे बड़ी बाधा है, जिसके तहत औद्योगिक तथा संपन्नतर उपभोक्ता, बिजली के अपेक्षाकृत ऊंचे दाम देकर, गरीब उपभोक्ताओं को सब्सीडाइज करते हैं। इसीलिए, क्रास-सब्सीडियों पर हमला हो रहा है।

इन सब्सीडियों का ज्यादातर लाभ, ग्रामीण उपभोक्ताओं को ही मिलता है, जिनमें कृषि के लिए उपभोग और घरेलू उपभोग, दोनों ही शामिल हैं। 2003 में एनडीए सरकार द्वारा बिजली कानून पारित किए जाने के बाद से ही, बिजली सब्सीडियों का 'खात्मा' भाजपा के एजेंडा पर रहा है। बहरहाल, पहली यूपीए सरकार ने, साझा न्यूनतम कार्यक्रम के अंतर्गत और वामपंथ के दबाव में, बिजली कानून के उक्त प्रावधान को बदल दिया था और 2003 में भाजपा सरकार ने क्रास सब्सीडियों के 'खात्मे' का जो प्रावधान किया था, उसकी जगह पर 'उत्तरोत्तर कमी' का प्रावधान कर दिया था।

लेकिन, अब जो नया बिजली (संशोधन) विधेयक, 2020 प्रस्तावित है, एक ही झटके में तमाम क्रास सब्सीडियों का खात्मा करने जा रहा है। यह विधेयक, राज्यों के बिजली नियामक प्राधिकारों को यह आदेश देता है कि 'सेवा की कीमत' के आधार पर बिजली की दरें तय करें और इसमें किसी क्रास सब्सीडी की जगह नहीं दी जाए। इसका अर्थ यह है कि सभी श्रेणियों के उपभोक्ताओं—कृषि, घरेलू, औद्योगिक—को, उस श्रेणी के लिए बिजली की आपूर्ति की कीमत के हिसाब से, बिजली का दाम देना पड़ेगा। अगर कोई राज्य सरकार इसके बाद भी उपभोक्ताओं की किसी भी श्रेणी को बिजली के उपभोग पर सब्सीडी देना चाहती है, तो उसे प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) व्यवस्था का सहारा लेकर ऐसी सब्सीडी देनी होगी।

ग्रामीण और अन्य गरीब उपभोक्ताओं पर हमला

इस नीति का पहला और सबसे सीधा असर तो यही होगा कि ग्रामीण उपभोक्ताओं, खासतौर पर कृषि उपभोक्ताओं से, बिजली की कहीं ज्यादा दर वसूल की जा रही होगी। आखिरकार, इन उपभोक्ताओं के लिए ही तो बिजली पहुंचाना सबसे खर्चीला होता है। उन तक बिजली पहुंचाने के लिए, बिजली के ट्रांसमिशन तथा वितरण की अपेक्षाकृत लंबी लाइनों की तथा स्टेप डाउन ट्रान्सफार्मर लगाने की जरूरत होती है और इस तरह बिजली की पहुंचाने की लाइनों में होने वाली बिजली की हानि के अलावा, अतिरिक्त लागतें भी आती हैं। दूसरी ओर, बड़े औद्योगिक उपभोक्ताओं को, जिन्हें हाईटेंशन लाइनों के जरिए बिजली मुहैया करायी जा रही होगी, बिजली के लिए काफी कम दर देनी पड़ेगी।

इसके बाद राज्यों को ऐसे बिजली उपभोक्ताओं की निशानदेही करनी होगी, जिन्हें बिजली के लिए प्रत्यक्ष सब्सीडी दिए जाने की जरूरत है और उनके लिए सब्सीडी का प्रावधान करना होगा। बेशक, यह सब्सीडी राज्य सरकार द्वारा सीधे संबंधित लाभार्थी को दी तो जाएगी, लेकिन उससे पहले संबंधित लाभार्थी को बिजली की पूरी कीमत के बिल का बिजली वितरण उपयोगिता को भुगतान करना होगा और यह भुगतान अगर नहीं किया जाता है तो, उनका बिजली का कनैक्शन ही काट दिया जाएगा। इस तरह, उपभोक्ताओं को पहले बिजली का पूरा बिल भरना होगा और इसके बाद सब्सीडी के अपने खाते में आने तक इंतजार करना होगा, जबकि यह सब्सीडी खाते में तभी आएगी, जब वह अपना भुगतानशुदा बिल पेश करेगा और उस पर बनने वाली सब्सीडी का हिसाब लगाया जाएगा। जाहिर है कि इसका पूर्वानुमान करने के लिए बहुत ज्यादा प्रतिभा की जरूरत नहीं होगी कि यह खेतिहर परिवारों की पहले ही दयनीय आमदनियों पर कैसी तबाही बरपा कर सकता है।

राज्यों की वित्तीय हालत पहले ही खस्ता है। ऐसे में उनसे क्रास सब्सीडियों के सहारे के बिना, अपने यहां के बिजली उपभोक्ताओं के बड़े-बड़े हिस्सों—किसानों, मजदूर वर्गीय परिवारों, छोटे गृह-आधारित उद्योगों, स्कूलों, सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्रों आदि, आदि—के बिजली के बिल के एक बड़े हिस्से का बोझ उठाने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? इससे तो राज्यों की वित्त व्यवस्था ही बैठ जाएगी। इसके ऊपर से अब जबकि राज्यों के राजस्व की ज्यादातर धाराओं पर केंद्र ने कब्जा कर लिया है और खासतौर पर अब जबकि जीएसटी को लागू किया जा चुका है तथा उसके अंतर्गत राज्यों का जो वैध हिस्सा बनता है, उसकी अदायगी में भी बार-बार देरी हो रही है, राज्य इन उपभोक्ताओं को बिजली पर सब्सीडी देने के लिए पैसा कहां से लाएंगे, जबकि इन उपभोक्ताओं की आजीविका ही बिजली की उपलब्धता पर निर्भर है? बिजली कोई सिर्फ ऐशो-आराम के लिए इस्तेमाल की चीज तो है नहीं। उसका उपयोग कर किसान अपने खेतों को सींचते हैं और हमें खाना मुहैया कराते हैं।

किसानों पर पड़ेगा असह्य बोझ

2018-19 में देश में बिजली की कुल बिक्री में, कृषि क्षेत्र का हिस्सा 22.4 फीसद रहा था। इसी वर्ष में इस बिजली की आपूर्ति की औसत कीमत (पीएफसी रिपोर्ट, 2018-19) थी, 6.13 रु0 प्रति यूनिट। अगर किसानों से यह कीमत वसूल की गयी होती, तो इससे **उन पर एक साल में एक लाख करोड़ रु0 से ज्यादा का बोझ पड़ा होता।**

अगर इस संशोधन को कानून बना दिया जाता है, तो 5 हार्सपॉवर का पंप सेट चला रहे किसान को बिजली के बिल में सीधे-सीधे करीब 3 हजार रु0 सालाना देने होंगे। यह मौजूदा लागत के मुकाबले, सिंचाई की लागत में 500 फीसद की बढ़ोतरी करना होगा। बेशक, इस संशोधन का असर, अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग हद तक होगा, जो वहां के जल स्तर, बिजली की कीमत, आदि पर निर्भर करेगा। फिर भी, इसमें किसी शक की गुंजाइश नहीं है कि नीति में यह बदलाव देश भर में छोटे तथा सीमांत किसानों के लिए सत्यानाशी ही साबित होगा।

मोदी सरकार को प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण योजनाओं से खास प्यार है। लेकिन, जैसा कि दूसरे अनेक क्षेत्रों का अनुभव दिखाता है, प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण योजनाओं को लागू कराना मुश्किल होता है। जिन मामलों में ऐसी योजनाओं के लाभार्थियों की निशानदेही अपेक्षाकृत आसान होती है उनमें भी, मिसाल के तौर पर उच्च शिक्षा के मामले में भी, छात्रों को अपनी वैध छात्रवृत्ति प्राप्त करने के लिए कई बार तो महीनों-महीनों इंतजार करना पड़ता है, जिससे उनमें से अनेक के लिए तो अपनी पढ़ाई जारी रख पाना भी बहुत ही मुश्किल हो जाता है। अनेक अध्ययनों ने दिखाया है कि डीबीटी योजना, रसोई गैस के मामले में विफल रही है और इसके मामले में इसकी कोई गारंटी नहीं होती है कि हस्तांतरित होने के बाद भी यह पैसा, गैस सिलेंडर खरीदने के वक्त पर महिला को मिल पाएगा।

इस मामले में तो चूंकि नकद सब्सीडी हस्तांतरण, नकदी की तंगी की मारी राज्य सरकारों द्वारा किया जा रहा होगा, यह सब्सीडी मिलने में देरी होने की ही संभावना है और बहुतों को इसके चलते कनैक्शन कटने का सामना करना पड़ सकता है। इनमें से अनेक उपभोक्ता, खासतौर पर छोटे तथा सीमांत किसान तो, लागत सामग्री की लगातार बढ़ती कीमतों तथा अपनी पैदावार की अलाभकर कीमतों के चलते, पहले ही ऋण के भारी बोझ के तले दबे हुए हैं और इसलिए इस बात का खतरा है कि इस बदलाव से पंप सेट आधारित सिंचाई के लिए बिजली जैसी अत्यावश्यक लागत सामग्री उनके हाथ से निकल जाए।

पुनः, कृषि क्षेत्र में सब्सीडी के संभावित हस्तांतरण भी उन्हीं तबकों को मिलेंगे, जिनके पास जमीन का स्वामित्व होगा। पट्टे की जमीनों पर या बंटाईदारी की खेती करने वालों को ये लाभ मिलेगा ही नहीं और उनके बिना बिजली के ही रह जाने की संभावना है।

सिर्फ धनी नहीं सभी किसानों का मुद्दा

अक्सर यह दलील दी जाती है कि सब्सीडियों का सबसे ज्यादा लाभ धनी किसानों को ही मिलता है और छोटे तथा सीमांत किसानों को इनका शायद ही कोई लाभ मिल पाता है। लेकिन, यह सही नहीं है। मिसाल के तौर पर आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाना जैसे राज्यों में, भूजल योजनाओं में से 40 फीसद से ज्यादा का स्वामित्व सीमांत किसानों के यानी एक हैक्टेयर से कम जमीन वाले किसानों के पास है। इसके अलावा 50 फीसद की मिल्कियत छोटे या अर्द्ध-मध्यम किसानों यानी एक से चार हैक्टेयर तक जमीन वाले किसानों के पास है। इसी प्रकार पंजाब तथा राजस्थान दोनों में, इन योजनाओं के 40 फीसद से ज्यादा की मिल्कियत छोटे तथा अर्द्ध-मध्यम यानी एक से चार हैक्टेयर तक जमीन वाले किसानों के पास है। मंझोले यानी चार से दस हैक्टेयर तक जमीन के मालिक किसानों के पास करीब 30 से 40 फीसद तक भूजल परियोजनाओं का स्वामित्व है।

दूसरी ओर, जहां तक भूतल जल परियोजनाओं का सवाल है, हरियाणा तथा पंजाब में मंझोले तथा बड़े किसानों के पास उनके कहीं ज्यादा हिस्से का स्वामित्व है। बहरहाल, भूतल जल सिंचाई की दरों में भारी सब्सीडी शामिल रहती है और इन दरों में बदलाव की तो कोई चर्चा हो नहीं रही है। लेकिन, बिजली के पंप सेटों पर आधारित, भूजल सिंचाई को ही लगातार महंगे से महंगा बनाने की कोशिश की जाती रही है।

अगर सरकार को भूमिहीन, सीमांत तथा छोटे किसानों की वाकई चिंता है, तो उसे इस सचाई को स्वीकार करना चाहिए कि इन लाभों तक असमान पहुंच, वास्तव में भूमि के वितरण के विकृत होने और देश के ज्यादातर हिस्सों में कोई गंभीर भूमि सुधार नहीं किए जाने का ही नतीजा है। बहरहाल, इन मुद्दों को हल करना तो कहीं दूर-दूर तक एजेंडा पर नहीं है।

दिल्ली की ओर जाने वाले रास्तों पर लाल झंडे फहराते देखकर, सरकार और मीडिया में बहुत से लोगों ने किसानों के मौजूदा विरोध प्रदर्शनों को विचारधारा से संचालित तथा दलगत कहना शुरू कर दिया है। लेकिन, इन विरोध प्रदर्शनों का इस तरह का चरित्रांकन वास्तव में उन लोगों के विचारधारा-संचालित तथा दलगत चरित्र को छुपाना चाहता है, जिन्होंने किसी जनतांत्रिक बहस-मुबाहिसे के दिखावे तक के बिना, एक के बाद एक कृषि कानूनों को धक्के से थोप दिया। जाहिर है कि दोनों में अंतर यही है कि एक विचारधारा किसानों तथा मेहनतकश अवाम के अधिकारों के हक में और दूसरी उनके खिलाफ खड़ी है। □

महिला किसान दिवसः हजारों महिलाओं ने किया विरोध प्रदर्शनों का नेतृत्व

–मरियम ढवले

गत 18 जनवरी को महिला किसान दिवस के मौके पर देश भर में विरोध प्रदर्शनों में हजारों महिलाओं की भारी और उत्साहपूर्ण भागीदारी देखने में आयी।

छः राष्ट्रीय महिला संगठनों–ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक वीमेंस एसोसियशन (एडवा), नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वीमेन (एनएफआइडब्लू), ऑल इंडिया प्रोग्रेसिव वीमेंस एसोसियशन (एआइपीडब्लूए), प्रगतिशील महिला संगठन (पीएमएस), ऑल इंडिया अग्रगामी महिला समिति (एआइएएमएस) और ऑल इंडिया महिला सांस्कृतिक संगठन (एआइएमएसएस)–ने किसान संघर्ष के साथ एकजुटता व्यक्त करने के लिए, 18 जनवरी को संयुक्त रूप से विरोध प्रदर्शन आयोजित करने का निर्णय लिया था।

संघर्ष की मांगों के अलावा इस दिन महिलाओं ने भोजन, काम तथा स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने, स्व–सहायता ग्रुपों के ऋण माफ करने और एमएफआइज द्वारा किए जा रहे उत्पीड़न के खिलाफ कार्रवाई करने जैसी मांगें भी उठायीं।

महिलाओं के मुद्दे उठाए गए

तीन कृषि कानून और बिजली विधेयक महिलाओं के हालात को और बदतरीन बना देंगे, आवश्यक वस्तुओं की आकाश छूती कीमतों के चलते लोगों की स्थिति और खराब हो जाएगी, जिन्हें पहले ही भारी संकट का सामना करना पड़ रहा है। इस महंगाई ने दो वक्त की रोटी जुटाना भी असंभव बना दिया है।

नया आवश्यक वस्तु (संशोधन) कानून इस स्थिति को और बदतर बना देगा। लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली पहले ही बदहाल स्थिति में है। मुफ्त खाद्यान्न वितरण, दिसंबर महीने में ही बंद किया जा चुका है। राशन की दुकानों से नियमित खाद्यान्न वितरण, अव्यवस्थित है। नेशनल फैमिली हैल्थ सर्वे (एनएफएचएस 5) से पता चलता है कि कुल 22 राज्यों में से 13 राज्यों में बच्चों में पूरा शारीरिक विकास न हो पाने की स्थिति, पिछले चार वर्षों के दौरान और बिगड़ी है।

यहां तक कि केंद्र सरकार द्वारा काम के प्रावधान से संबंधित तमाम बड़े–बड़े वादों के बाद भी सच्चाई यही है कि कोई काम उपलब्ध नहीं है। मनरेगा का काम व्यवहारिक तौर बंद किया जा चुका है। असंगठित क्षेत्र में महिलाएं, शहरी रोजगार गारंटी योजना को लागू करने की मांग कर रही हैं क्योंकि महामारी के दौरान, जीवनयापन के उपाय बहुत कम हो गए हैं। ऋणग्रस्तता कई गुना बढ़ी है।

घटती पारिवारिक आय से पार पाने के लिए महिलाओं को अपने जेवर या अन्य मूल्यवान चीजें बेचने पर मजबूर होना पड़ा है, रसोई के खर्चों में कटौती करनी पड़ी है या फिर अपने कर्जे उतारने के लिए, दूसरे समझौते करने पड़े हैं। इस अभियान के दौरान मोदी सरकार के खिलाफ महिलाओं का गुस्सा साफ तौर पर नजर आया। यहां 18 जनवरी को हुई विरोध कार्रवाइयों की राज्यवार संक्षिप्त रिपोर्ट प्रकाशित की जा रही है:

एडवा तीन महीने से हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड तथा अन्य अनेक राज्यों में तीन कृषि कानूनों के खिलाफ निरंतर अभियान चलाती रही है।

हरियाणा

एडवा की हरियाणा इकाई बहुत ही सक्रिय रही है। महिलाओं ने मीटिंगों का आयोजन किया, हिंदी और पंजाबी में पर्चे बांटे, गीत लिखे, गाने लिखे और निरंतर बढ़ती तादाद में दिल्ली के सभी पांचों बॉर्डरों पर विरोध कार्रवाइयों में भाग लिया। अनेक महिलाओं को गिरफ्तार भी किया गया। एडवा कार्यकर्ताओं की टीमों ने हरियाणा के 150 गांवों और 70 कालोनियों में मीटिंगें आयोजित कीं और करीब 35,000 पर्चे बांटे।

महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए टोल प्लाजाओं और टीकरी तथा सिंघू बॉर्डरों तक, महिला जत्थों का आयोजन किया गया। अब बड़ी संख्या में महिलाएं ट्रैक्टरों तथा ट्रॉलियों के जरिए उत्साह के साथ गीत गाते हुए और नारे लगाते हुए पंहुच रही हैं।

गत 27 दिसंबर को महिलाओं का एक जत्था शाहजहांपुर बॉर्डर पंहुचा। आवश्यक वस्तु कानून को कमजोर किए जाने और सार्वजनिक वितरण प्रणाली को खत्म किए जाने के खिलाफ जिला स्तरीय धरनों का आयोजन किया गया है। एडवा के नेता तथा कार्यकर्ता, 26 नवंबर से ही नाकेबंदियों में शिरकत कर रहे हैं। 26 नवंबर से ही यह नाकेबंदियां शुरू हुयी थीं।

15 से 21 दिसंबर तक टीकरी बॉर्डर पर एक कैंप स्थापित किया गया था, जिसमें हर रोज विभिन्न जिलों की महिलाएं भाग ले रही थीं। पंजाब की उन महिलाओं के लिए, जो विरोध धरनों में भाग ले रही हैं, मदद का आयोजन किया गया।

हरियाणा के 20 जिलों में 50 स्थानों पर किसान महिला दिवस का आयोजन किया गया। इस मौके पर आयोजित प्रदर्शनों में हर जगह 500 से लेकर 4,000 तक महिलाओं ने भाग लिया। खुद महिलाएं ट्रैक्टर तथा ट्रॉलियां लेकर विरोध प्रदर्शन स्थलों पर पंहुचीं।

सिंघू, टिकरी तथा पलवल बॉर्डरों पर इस दिन महिलाओं ने कार्रवाइयों में भाग लिया। महिलाओं की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए एडवा ने महिला किसानों के बीच एक व्यापक अभियान चलाया और पर्चे भी बांटे, जिनमें इन तीन कृषि कानूनों के लैंगिक पहलू के बारे में विस्तार से बताया गया था।

महिलाओं को किसानों की भूमिका में दिखाते हुए विभिन्न स्थानों पर बैनर लगाए गए थे। 26 जनवरी गणतंत्र दिवस की किसान परेड में महिलाएं बड़ी संख्या में भाग ले रही हैं।

पंजाब

सिंघू बॉर्डर के आसपास के जिलों की महिलाएं नियमित अंतराल पर नाकेबंदियों में भागीदारी कर रही हैं। एडवा की अमृतसर इकाई ने 9-10 जनवरी को 'जागो' का आयोजन किया। होशियारपुर, अमृतसर, जलंधर तथा भटिंडा में तीन कृषि कानूनों की प्रतियां जलायी गयीं।

चंडीगढ़, भटिंडा, होशियारपुर, जलंधर, पठानकोट तथा गुरदासपुर में महिला दिवस पर धरनों, मोमबत्ती जुलूसों तथा रैलियों का आयोजन किया गया। अमृतसर में आयोजित संयुक्त रैली के लिए एडवा ने बड़ी संख्या में महिलाओं को लामबंद किया था।

राजस्थान

एडवा ने गत 17 जनवरी को जयपुर में एक विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया और 18 जनवरी को एक बस में सवार होकर महिला कार्यकर्ता शाहजहांपुर बॉर्डर पंहुचीं और विरोध प्रदर्शन कर रहे किसानों में शामिल हुयीं। गंगानगर में महिलाओं ने अनेक गांवों में और जिलाधिकारी कार्यालय पर प्रदर्शन किया। बीकानेर जिले की महिलाओं की शाहजहांपुर बॉर्डर पर निरंतर मौजूदगी बनी रही है।

सीकर, हनुमागढ़ तथा अलवर की महिलाएं भी बड़ी संख्या में शाहजहांपुर बॉर्डर पंहुच रही हैं और विरोध प्रदर्शन में भाग ले रही हैं। हनुमानगढ़ में गांवों में 10 स्थानों और तहसील स्तर पर विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया गया। जिला स्तर पर एक मशाल जुलूस का आयोजन भी किया गया।

कोटा तथा जोधपुर में भी प्रदर्शनों का आयोजन किया गया। अनेक जिलों से तीन कृषि कानूनों को निरस्त किए जाने की मांग करते हुए, भारत के राष्ट्रपति को ज्ञापन भेजे गए हैं।

दिल्ली

तीन कृषि कानूनों के किसानविरोधी पहलुओं के बारे में बताते हुए जिलों में स्थानीय स्तर पर मीटिंगों का आयोजन किया गया और पर्चे बांटे गए। 'दिल्ली फॉर फार्मर्स' मंच के साथ मिलकर, पांच स्थानों पर इन कानूनों की प्रतियां जलायी गयीं।

सिंघू, टीकरी तथा गाजीपुर बॉर्डरों पर बड़ी संख्या में महिलाओं ने कार्रवाइयों में भाग लिया। एडवा की महासचिव मरियम ढवले,

सह-सचिव आशा शर्मा तथा उपाध्यक्ष जगमति सांगवान, 18 जनवरी को सिंघू तथा टीकरी बॉर्डरों पर मौजूद थीं।

उत्तरप्रदेश

गत 13 जनवरी को लखनऊ, कानपुर, आगरा, चित्रकूट तथा जालौन जिलों में तीन कृषि कानूनों की प्रतियां जलायी गयीं। कानपुर से एडवा की उपाध्यक्ष सुभाषिणी अली के नेतृत्व में महिलाओं का एक जत्था 18 जनवरी को बस से गाजीपुर बॉर्डर पंहुचा और उसने विरोध प्रदर्शन में भाग लिया।

आगरा की महिलाओं ने पलवल बॉर्डर पर विरोध प्रदर्शन में भाग लिया। सुल्तानपुर, चंदौली तथा सोनभद्र जिलों में आयोजित कार्रवाइयों में भी, अनेक महिलाओं ने भाग लिया।

मध्यप्रदेश

भोपाल, ग्वालियर, गुना, मुरैना, दतिया, जबलपुर तथा भिंड की महिलाएं नियमित रूप से पलवल तथा मेवात बॉर्डरों पर, नाकेबंदी तथा आंदोलन में भाग ले रही हैं। बॉर्डरों के आस-पास के गांवों में भी वे मीटिंगों का आयोजन कर रही हैं। भोपाल, रीवां, ग्वालियर, मुरैना, कैलारस, भिंड, गुना, अनूपपुर तथा सिहोर जिलों में भी, कार्रवाइयों का आयोजन किया गया है। इस अभियान के लिए पर्चे बांटे गए। भोपाल के ग्रामीण क्षेत्रों में मीटिंगों का आयोजन किया गया। गत 3 जनवरी को एडवा तथा बीजीवीएस ने संयुक्त रूप से पलवल के लिए एक जत्थे का आयोजन किया और वहां भारी बारिश के बावजूद, बड़े ही उत्साहपूर्ण ढ़ंग से एक सांस्कृतिक कार्यक्रम पेश किया और भाषण दिए।

केरल

लैफ्ट-डेमोक्रेटिक वीमेंस फ्रंट के बैनर तले नौ महिला संगठनों के साथ एडवा ने 18 जनवरी को त्रिवेंद्रम के राज भवन के सामने एक विरोध रैली का आयोजन किया, जिसमें करीब 350 महिलाओं ने भाग लिया। इन नौ संगठनों के सभी राज्य पदाधिकारियों ने, इस मार्च में भाग लिया।

राज्य के सभी 14 जिलों में आयोजित दिन भर चले सत्याग्रह में 4,000 से ज्यादा महिलाओं ने भाग लिया। पालघाट में महिला किसान अपनी फसलों से भरे ट्रैक्टरों पर सवार होकर पंहुचीं। किसान महिला दिवस के सिलसिले में एडवा ने एक वेबिनार का भी आयोजन किया, जिसे मरियम ढ़वले तथा एनी राजा ने संबोधित किया।

पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल के 20 जिलों में महिला किसान दिवस मनाया गया। इन 20 जिलों में हरेक में पांच से ज्यादा लोकल कमेटियों ने विरोध कार्रवाइयों का आयोजन किया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के पुतलों तथा तीन कृषि कानूनों की प्रतियों का दहन किया गया।

अखिल भारतीय किसान सभा के साथ मिलकर कोलकाता में 20 से 22 जनवरी तक आयोजित किए जानेवाले तीन दिवसीय धरना प्रदर्शन में सैकड़ों महिलाएं शामिल हुईं। एडवा समेत विभिन्न महिला संगठनों ने विभिन्न जिलों में विरोध कार्यक्रमों का आयोजन किया।

त्रिपुरा

पुलिस दमन और एडवा की राज्य सचिव झरना दास पर भाजपायी गुंडों द्वारा किए गए हमले के चलते, राज्य में विरोध कार्रवाइयों को स्थगित कर दिया गया।

तमिलनाडु

चेन्नै में राजभवन पर मार्च के दौरान एक जुझारू विरोध प्रदर्शन में 200 से ज्यादा महिलाओं ने पुलिस की घेराबंदी तोड़ डाली। चालीस से ज्यादा महिला संगठनों के ऑल इंडिया फेडरेशन द्वारा संयुक्त रूप से इस प्रदर्शन का आयोजन किया गया था। बाद में पुलिस ने सभी महिलाओं को गिरफ्तार कर लिया।

आंध्र प्रदेश

राज्य के 21 जिलों में 65 से ज्यादा स्थानों पर आयोजित रैलियों, मीटिंगों, धरनों तथा मानव शृंखलाओं में करीब 3,000 महिलाओं ने भाग लिया। विशाखापट्टनम शहर में एक स्कूटर रैली आयोजित की गयी थी। विजयवाड़ा तथा अनंतपुर में भी शानदार रैलियों का आयोजन किया गया। करीब 10,000 आंगनवाड़ी मजदूरों ने 186 क्षेत्रों में सक्रिय रूप से इन विरोध कार्रवाइयों में भाग लिया।

तेलंगाना

युनाइटेड एक्शन ऑफ वीमेंस एसोसियशन्स के बैनर तले राज्य के 10 जिलों में संयुक्त रैलियों का आयोजन किया गया, जिनमें करीब 863 लोगों ने भाग लिया। महिला संगठनों तथा ट्रांसजेंडरों ने राज्य केंद्र पर एक रैली का आयोजन किया। केंद्रीय मंत्रियों के पुतले भी जलाए गए।

कर्नाटक

राज्य में एक संयुक्त जत्थे का आयोजन किया गया। 20 से ज्यादा बाइकों तथा दो ट्रैक्टरों पर सवार महिलाओं ने मांड्या में

जिला कलेक्टर कार्यालय पर प्रदर्शन किया। बेलारी, गुलबर्गा, बीजापुर, बीदर, कोलार तथा बंगलूरू में आयोजित विरोध प्रदर्शनों में, कुल मिला कर करीब 400 महिलाओं ने भाग लिया।

महाराष्ट्र

महाराष्ट्र के ठाणे-पालघर, सोलापुर, मुंबई, रायगढ़, नागपुर,वर्धा, अमरावती, पुणे, सांगली तथा सतारा जिलों में 100 से ज्यादा स्थानों पर आयोजित विरोध कार्रवाइयों में करीब 2,000 महिलाओं ने भाग लिया। इन विरोध कार्रवाइयों के दौरान, इन तीन कृषि कानूनों की प्रतियां जलायी गयीं।

मुंबई में भी विरोध कार्रवाई का आयोजन किया गया। पुणे में दूसरे महिला संगठनों के साथ मिलकर महिला किसानों की एक कन्वेंशन आयोजित की गयी। 23-24 जनवरी को अखिल भारतीय किसान सभा, सीटू, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन, डीवाइएफ आइ तथा एसएफआइ द्वारा संयुक्त रूप से नासिक से मुंबई तक आयोजित किए जानेवाले वाहन जत्थे और 24 से 26 जनवरी तक मुंबई में संयुक्त रूप से राज भवन तक आयोजित किए जानेवाले महापड़ाव तथा मार्च में, हजारों महिलाएं शामिल हुईं।

बिहार

पटना के कारगिल चौक पर एक संयुक्त प्रदर्शन का आयोजन किया गया। मुजफ्फरपुर, सीतामढ़ी, मधुबनी, फूलपरास, घोघड़डीह, सहरसा, खगड़िया, ईशुआपुर, परसा, समस्तीपुर, आरा, भभुआ, गया, भागलपुर, बेतिया तथा दरभंगा में आयोजित विरोध प्रदर्शनों में, करीब 5,000 महिलाओं ने भाग लिया।

ओडिशा

भुवनेश्वर में राजभवन तक एक रंगारंग मार्च आयोजित किया गया। बालासोर, भद्रक, कटक तथा गंजाम में प्रदर्शनों का आयोजन किया गया। एडवा ने ऑटोरिक्शों पर लाउडस्पीकर लगाकर घोषणाएं करने के साथ यूनिट तथा ब्लॉक स्तर पर अभियान चलाए थे। केंद्रपाड़ा, सुंदरगढ़ तथा मयूरभंज में संयुक्त रैलियों का आयोजन किया गया। करीब 500 महिलाओं ने इन विरोध प्रदर्शनों में भाग लिया।

असम

एडवा ने राज्य के 10 जिलों में 14 स्थानों पर विरोध कार्रवाइयों का आयोजन किया था। करीब 873 महिलाओं ने इन कार्रवाइयों में भाग लिया। पांच जिलों में बिरादराना संगठनों के साथ संयुक्त विरोध कार्रवाइयों का आयोजन किया गया था। प्रधानमंत्री को ज्ञापन भी भेजे गए।

झारखंड

पाकुड़, धनबाद, रांची, पूर्वी-सिंहभूम, गोड्डा, सरायकेला, जामताड़ा तथा साहिबगंज जिलों में 18 यूनिटों द्वारा आयोजित कार्रवाइयों में सैकड़ों महिलाओं ने भाग लिया।

गुजरात

गुजरात में आयोजित संयुक्त विरोध कार्रवाइयों में 250 से ज्यादा महिलाओं ने भाग लिया।

उत्तराखंड तथा छत्तीसगढ़ और दूसरे भी अनेक राज्यों में, विरोध कार्रवाइयों का आयोजन किया गया। □

आईटीओ से लाल किले तक वाया अर्णब गेट
कारपोरेट के हरम की साजिशों के कुहासे में गणतंत्र

-पंकज मेघ

इस साल की 26 जनवरी की ख़ास बात, आजादी के बाद पहली बार इतनी भारी तादाद में, किसानों की अगुआई में, देश की जनता का खुद तिरंगे झण्डे लेकर गणतंत्र दिवस की परेड करने निकल पड़ना था। अब तक मिली जानकारी के अनुसार कोई 700 जिलों में ढ़ाई हजार से ज्यादा स्थानों पर, लाखों ट्रैक्टर तिरंगा झण्डा लगाकर आजादी और गणतंत्र की हिफाजत का अलख जगाने निकले। अकेले दिल्ली में ही करीब ढ़ाई लाख ट्रैक्टर इस परेड में शरीक थे। किसान आंदोलन की जगार इस कदर थी कि दूर बस्तर के अबूझमाड़ के करीब के कस्बे से, झारखंड के निपट आदिवासी गांव, जहां अभी ट्रैक्टर्स पहुंचे ही नहीं हैं, वहां से लेकर उत्तर-पूर्व के राज्यों तक में, यह किसान परेड हुयी। कहीं बैलगाड़ी तो कहीं बुग्गी, कहीं भैंसा गाड़ी तो, कहीं यूं ही बाइक्स या साइकिल या पांव-पांव ही निकले - मगर किसान परेड पर निकले। दुनिया के अनेक देशों में रहने वाले भारतीयों ने भी इस दिन, भारत के राष्ट्रीय ध्वज को लेकर अपने पैतृक देश के किसानों के साथ एकजुटता कार्यवाहियां कीं। बिना किसी अतिरंजना के कहा जा सकता है कि इससे, पहले इतने सारे तिरंगे झण्डे एक साथ इस देश ने कभी नहीं देखे थे - 15 अगस्त 1947 को भी नहीं क्योंकि तब भारत की आबादी, आज की जनसंख्या का एक चौथाई भर थी। इतने जबरदस्त जनसमर्थन की उम्मीद किसान आंदोलन से जुड़े अत्यंत आशावादी व्यक्तियों को भी नहीं थी। इस विराट भागीदारी का एक और मुखर पहलू इसमें श्रमिकों और जनता के बाकी हिस्सों की शिरकत थी। महिलाएंँ, युवा, कॉलेज और विश्वविद्यालयों से लेकर स्कूलों तक के छात्र, अपनी-अपनी तरह से अपने-अपने यहां की इन परेडों में शामिल हुए। एक तरह से पूरा हिन्दुस्तान गणतंत्र के रूप और सार दोनों को बचाने के लिए तिरंगा उठाये सड़कों पर था। किसी भी लोकतांत्रिक सभ्य समाज के शासकों को इस पर खुश होना चाहिए था - मगर गण की इस तरह अभिव्यक्त हुयी शक्ति ने मोदी की अगुआई वाले कार्पोरेटपरस्त हुक्मरानों के होश उड़ा दिए और तंत्र में बैठे शातिरों ने खुद अपने ही गण को बदनाम करने के लिए सारी सीमाएं ही लांघ दीं।

निहायत सकारात्मक तरीके से अभिव्यक्त हो रहे इस अभूतपूर्व जनआक्रोश का आदर करने और उसे सम्मानजनक जगह देने के बजाय, सत्ता में बैठे कारपोरेट के रोकडियों, तिकड़मियों और साजिशियों ने, अपने गुर्गों के जरिये पहले कुछ बेहूदी और शर्मनाक हरकतें या तो करवाईं या फिर आसानी से होने दीं और उसके बाद उसी कारपोरेट के हरम में बैठे मीडिया ने दिल्ली की दो अपवाद घटनाओं को तूल देकर, भारतीय जनता के इस प्रतिरोध उत्सव के खिलाफ युद्ध सा ही छेड़ दिया। हालांकि, उसी शाम तक यह उजागर भी हो गया कि ये दोनों ही घटनाएं; आईटीओ पर भिड़ंत और लालकिले पर राष्ट्रीय ध्वज के नीचे कोई झंडा फहराने की भर्त्सना योग्य कार्यवाही, अंजाम देने वाले सत्ताधारी पार्टी से जुड़े हुए वे करीबी लोग थे जो न तो किसान थे ना ही सिख। इन्हें यहां तक लाने और पहुंचाने में, सरकार पूरी तरह मददगार बनी हुयी थी। इनमें से एक - झण्डा फहराने वाले गिरोह के अगुआ दीप सिद्धू - की तस्वीरें खुद मोदी के साथ सार्वजनिक हो चुकी हैं। यह भी सामने आ चुका है कि यह उत्पाती, 2019 के लोकसभा चुनाव में भाजपा के सांसद सनी देओल का आधिकारिक चुनाव एजेंट भी था। पुलिस बंदोबस्त के बीच, इसके वहां तक पहुंचने और ड्यूटी पुलिस वालों के सक्रिय मार्गदर्शन और निगरानी के बीच झण्डा फहराने की पहेली का समाधान, मोदी के साथ खिंचे इसके फोटो से हो जाता है। इस घटना के बाद अब तक जिन दो सौ किसानों के गिरफ्तार किये जाने का दावा किया गया है, उनमें दीप सिद्धू नहीं है। वजह साफ़ है।

दूसरी घटना आईटीओ की है जहां बैरीकेड्स तोड़ने और पुलिस के साथ टकराव (असल में ट्रैक्टरों पर पुलिस लाठीचार्ज) के वीडियो दिन भर चलाये गए। मगर पुलिस अभी तक नहीं बता पायी है कि जहां किसान 26 नवम्बर से लगातार बैठे हुए हैं, उन पांचों बॉर्डर्स सिंघु, टीकरी, गाज़ीपुर, पलवल, शाहजहांपुर तथा हाल ही में शुरू हुए मेवात बॉर्डर धरने से, संयुक्त किसान मोर्चे की ट्रैक्टर यात्रा के लिए गांवों और दूरदराज के रास्ते देने में भी हीले-

हवाले और आनाकानी करने के बीच, उसने किसान मोर्चे में जो शामिल ही नहीं था, उस एक छोटे से संदिग्ध गुट को आईटीओ से होते हुए लालकिले तक जाने की अनुमति कैसे दे दी? जबकि इस गुट की तरफ से एलानिया कहा जा रहा था कि वह ऐन लाल किले तक जाएगा। खुद पुलिस कमिश्नर, किसान परेड के रूट तय करने वाली चर्चाओं में शामिल थे। ज्यादातर मार्ग ऐसे तय किये गए थे जिनमें दिल्ली दूर ही रह जाती थी और ट्रैक्टर परिक्रमा करके वापस लौट जाने थे। ऐसा ही हुआ भी। फिर अचानक एक असंबद्ध धड़े को दिल्ली के बीचों-बीच जाने की अनुमति किसके कहने पर दी गयी?

जाहिर है यह इस ऐतिहासिक किसान आंदोलन को बदनाम करने और उसके प्रति उमड़ रहे जनसमर्थन को गुमराह करने की बड़ी चाल थी। कौन है इस षडयंत्र सूत्रधार ? कौन है जिसने इस तरह की साजिशों को अमल में लाकर 6 महीने से पंजाब, हरियाणा और 2 महीने से देश भर में चल रहे किसानों के ऐतिहासिक आंदोलन को बदनाम करने और उसे कठघरे में खड़ा करने की कोशिशें की हैं। इसकी तुलना विश्व इतिहास के एक ऐसे ही जघन्य षडयंत्र से की जा सकती है और वह है जर्मनी की संसद राइख़स्टॉग को खुद ही आग लगवा कर, दूसरों को बदनाम करने की उस समय के उभरते हिटलर की करतूत। जाहिर है कि यहां उसे दोहराने वाले भी उसी के गुरुकुल से निकल सरकार में बैठे शीर्षस्थ हैं। जिन्होंने ठीक वही फार्मूला किसान आंदोलन को बदनाम करने के लिए आजमाया है। इन पंक्तियों के लिखे जाने तक अनेक तथ्यों के सामने आ जाने और असलियत उजागर हो जाने के बाद भी, लगातार गोयबल्स के अंदाज में बार-बार एक ही झूठ दोहराया जा रहा है।

मौजूदा हुक्मरानों का कुल-कुटुंब इस तरह की आपराधिक तिकड़मों में माहिर है। डा0 राजेन्द्र प्रसाद (जो बाद में भारत के प्रथम राष्ट्रपति बने) ने देश के प्रथम गृहमंत्री सरदार पटेल को 14 मार्च सन् 1948 को भेजे एक पत्र में लिखा था कि, 'मुझे बताया गया है कि आरएसएस के लोगों ने झगड़ा पैदा करने के लिए मंसूबा बनाया है। उन्होंने बहुत सारे लोगों को मुसलमान पहनावा पहनाकर, मुसलमान जैसा दिखने वालों के रूप में, हिंदुओं पर आक्रमण करने की योजना बनाई है ताकि झगड़ा पैदा हो और हिन्दू भड़क जायं। इसी के साथ इनके साथ कुछ हिन्दू होंगे जो मुसलमानों पर हमला करेंगे ताकि मुसलमान भड़क जाएं। इस सबका परिणाम यह होगा कि हिन्दू-मुसलमान भिड़ेंगे और एक बड़ा झगड़ा पैदा हो जायेगा।' इस बीच ऐसी अनगिनत घटनायें

सामने आ चुकी हैं। फर्क यही है कि तब यह गिरोह सिर्फ हिन्दू-मुसलमान खेल रहा था। आज इसके निशाने पर इसके अलावा, इसके साथ-साथ मजदूर और किसान हैं, लोकतंत्र और संविधान है, असल में तो पूरा हिन्दुस्तान है। इसलिए, अब इसकी साजिशें नए-नए आयाम लेती जा रही हैं। हिटलर की तरह जर्मन संसद राइख़स्टॉग पर नकली हमले जैसी पटकथाएं, भारत में मंचित करने की कोशिशें जारी हैं। मंशा स्पष्ट है और वह यह है कि देश का जो होना है सो हो, कारपोरेट की लूट में रत्ती भर अवरोध नहीं आना चाहिए।

टेलीविज़न मीडिया - इस बार बिना किसी अपवाद के समूचा टीवी मीडिया - जिस तरह लहक-लहक कर इन दो अपवाद घटनाओं को अतिरंजित रूप में दोहरा रहा था और बाकी देश भर में हुयी कार्यवाहियों को छुपा रहा था - वह क्यों और कैसे, किसलिए और किसके लिए था, इसकी कुंजी हाल ही में उजागर हुए अर्णब-गेट के ताले की चाबी से मिलान करके समझी जा सकती है।

अर्णब गोस्वामी और टीवी चैनल्स की लोकप्रियता जांचने वाली एजेंसी बार्क के प्रमुख पार्थो दासगुप्ता के बीच हुई व्हाट्सएप्प चैट्स के जो दस्तावेज मुम्बई पुलिस ने अदालत में पेश किये हैं, वे सिर्फ देश की सुरक्षा के हिसाब से ही चिंताजनक और चौंकाने वाले नहीं हैं। वे डराने वाले हैं। वे भाजपा गिरोह द्वारा इस देश के गणतंत्र को भुरभुरा और असुरक्षित बनाने और संविधान की मर्यादा को खण्डित करने वाले भी हैं। किसी के द्वारा आज तक उनका खंडन न करना जहां उनकी अकाट्य सत्यता का सबूत है, वहीं सत्ता और सरकार का इन स्तब्धकारी खुलासों पर चुप्पी साध लेना, लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में निहित जवाबदेही से मुकरना और अपने चाकरों के जुर्मों में आपराधिक हिस्सेदारी के उत्तरदायित्व से कन्नी काटना है। पिछली एक सदी में, इससे भी छोटे मामलों के सामने आने पर दुनिया भर की सरकारों को इस्तीफे तक देने पड़े हैं। मगर मौजूदा सरकार ढीठता और निर्लज्जता के मामले में, अब तक की सबसे मट्ठर सरकार है। इससे ऐसी उम्मीद करना, किसी भेड़िये से शाकाहारी होने की उम्मीद करने से भी ज्यादा है।

इन व्हाट्सएप्प चैट्स में मोदी सरकार के गुजरे वर्षों में लिया गया ऐसा शायद ही कोई गोपनीय - टॉप सीक्रेट - फैसला हो, जिसकी अग्रिम जानकारी या पूर्व-सूचना, अर्नब गोस्वामी के पास नहीं थी और जैसा कि उजागर हुई चैट्स से सामने आया है, बार्क वाले पार्थो दासगुप्ता तक न पहुंची थी । वह चाहे वेंकैया नायडू को उपराष्ट्रपति बनाने वाला फैसला हो, स्मृति ईरानी को सूचना प्रसारण मंत्रालय सौंपे जाने की खबर हो, मोदी और अमित शाह के बाद तीसरा बन्दा अर्णब ही था जिसके साथ चौथा बनने वाला पार्थो था - जो कुछ हजार डॉलर और पीएम और एएस (अमित शाह) को साधने के वचन के एवज में, उसके चैनल की रेटिंग बढ़ाने के लिए धांधली दर धांधली किये जा रहा था।

इन चैट्स का सबसे हैरान और विचलित करने वाला हिस्सा है, फर्जी राष्ट्रवाद उभारने के लिए पुलवामा में हुयी सैनिकों की शहादत पर उल्लास से कूदना, लार टपकाना और बालाकोट की संभावना पर, चुनावों में साहब की पगलाने वाली जीत की उम्मीदों पर बलिहारी जाना। यह वह अमानवीय किलर इंस्टिंक्ट है, जिसे राष्ट्रवाद का मुलम्मा चढ़ाकर सैनिकों की लाशों के ढेर को सत्ता तक पहुंचने की सीढ़ी बनाने में कोई गुरेज नहीं है। बालाकोट जैसे अतिगोपनीय फैसलों की पूर्व-सूचना अर्णब के पास होना और उसका आगे तक पहुंचना, कश्मीर से धारा 370 हटाने की माहिती पहले से इसे होना, ऐसी ही उन हजारों सूचनाओं में से एक है जो इन व्हाट्सप्प चैट्स में सामने आयी हैं। साफ़ है कि अर्णब तक इन बातों को पहुंचाने वाला कोई छुटका बाबू या कम्प्यूटर ऑपरेटर नहीं है, खुद श्रीमुख से यह जानकारियां रिसीं और टपकी लगती हैं। यह सिर्फ गोपनीय और अति-गोपनीय सूचनाओं की सार्वजनिकता और उसमे निहित खतरों और आशंकाओं का मामला नहीं है। यह उससे आगे की बात है। यह जनभावनाओं को भटकाने और भड़काने और इस तरह गणतंत्र के बुनियादी तत्वों को दरकाने का मामला है। यह फाउल प्ले भर नहीं है - यह कारपोरेट के हरम का ऐसा धतकरम है, जिसमें देश और जनता के विरुद्ध साजिशों और षडयंत्रों का जाल बुना और बिछाया जाता है। कार्पोरेटी हिंदुत्व की विनाश यात्रा का रास्ता हमवार करने के लिए, इस जाल का मखमली कालीन बिछाया जाता है।

मगर उनके लिए दिक्कत की बात यह है कि जनता अभी भी इनके उकसावे या भुलावे में नहीं आ रही है। वह सब समझ भी रही है और इस कुहासे को चीरने के लिए एकजुट भी हो रही है। सारे मीडिया और पूरी सरकार के झूठे और साजिशी प्रचार के बावजूद, करोड़ों लोग किसानों की गणतंत्र परेड के साक्षी और भागीदार बने ही। यही एकता इन्हे सबसे ज्यादा डराती है। जरूरत इन्हें और भी ज्यादा डराने और इन्हे सभ्यता की बसाहटों से बाहर खदेड़ आने की है - मतलब एकता और अधिक बढ़ाने की है। आने वाले दिन, इसी चुनौती से जूझने और इस मकसद को हासिल करने के होंगे यह तय है।

□

किसान-मजदूर पदयात्राओं से सामने आया इस्पाती संकल्प-जीतने तक लड़ेंगे

-वीजू कृष्णन

अखिल भारतीय किसान सभा, सीटू तथा अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन ने भगतसिंह और साथियों के शहादत दिवस की पूर्व-संध्या में, स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों और मौजूदा ऐतिहासिक किसान आंदोलन के करीब 300 शहीदों को याद करते हुए, तीन शहीद यादगार किसान-मजदूर पदयात्राओं का आयोजन किया।

ये पदयात्राएं नरेंद्र मोदी के नेतृत्ववाली भाजपा सरकार द्वारा पारित किए गए किसानविरोधी तथा मजदूरविरोधी कानूनों के खिलाफ प्रतिरोध का साफ संदेश देने में सफल रहीं। किसान जनता के ऐतिहासिक संघर्ष को और मजबूत करने और सरकार की कार्पोरेटपरस्त तथा जनविरोधी नीतियों के खिलाफ अभियान को आगे ले जाने के लक्ष्य को लेकर आयोजित इन पदयात्राओं ने, जनता तक यह जोरदार संदेश पंहुचाया कि जीत हासिल होने तक यह एकजुट संघर्ष जारी रहेगा।

इन तीन पदयात्राओं में पहली पदयात्रा 18 मार्च को हरियाणा के हिसार जिले के हांसी की लोकख्यात लाल सड़क से शुरू हुयी, जिसे 120 किलोमीटर का रास्ता तय कर टीकरी बॉर्डर पंहुचना था। इस सड़क का नाम लाल सड़क इसलिए पड़ा था क्योंकि 1857 के पहले स्वतंत्रता संघर्ष के बाद ब्रिटिश निजाम ने इसे हजारों बेगुनाहों के खून से रंग डाला था।

शहीद भगतसिंह की भतीजी गुरजीत कौर ने झंडी दिखाकर इस पदयात्रा को रवाना किया। इस अवसर पर आयोजित किसानों, मजदूरों, खेतमजदूरों, युवाओं तथा महिलाओं की विशाल सभा को गुरजीत कौर, अखिल भारतीय किसान सभा के अध्यक्ष डा0 अशोक ढ़वले, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन के सहसचिव डा0 विक्रम सिंह, हरियाणा किसान सभा के उपाध्यक्ष इंद्रजीत सिंह, सीटू के हरियाणा राज्य सचिव जय भगवान और अन्य लोगों ने संबोधित किया।

सभा को संबोधित करते हुए गुरजीत कौर ने किसानविरोधी और मजदूरविरोधी कानूनों के खिलाफ सभी के एकजुट होकर लड़ने की जरूरत पर जोर दिया और उनका आह्वान किया कि भगतसिंह तथा दूसरे शहीदों के संघर्ष को आगे बढ़ाएं। इस मौके पर विभिन्न किसान संगठनों तथा ट्रेड यूनियनों के नेता मौजूद थे।

वक्ताओं ने स्वतंत्रता संघर्ष के शहीदों को और मौजूदा ऐतिहासिक किसान संघर्ष में अब तक शहीद हुए करीब 300 किसानों को

श्रद्धांजलि अर्पित की। अखिल भारतीय किसान सभा के सहसचिव वीजू कृष्णन, किसान सभा के पंजाब राज्य सचिव मेजरसिंह पुन्नेवाल, हरियाणा राज्य सचिव सुमित, बिहार राज्य सहसचिव पी एन राव और हरियाणा के अन्य नेता भी इस अवसर पर मौजूद थे। पदयात्रा शुरू करने से पहले नेताओं ने हांसी के शहीदों की याद में बने शहीद स्मारक पर शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित की।

इस पदयात्रा की एक उप-यात्रा जींद जिले से शुरू हुयी जिसे सीटू सचिव ए आर सिंधु ने झंडी दिखाकर रवाना किया। उन्होंने इस अवसर पर आयोजित आम सभा को भी संबोधित किया। अखिल भारतीय किसान सभा के वित्त सचिव पी कृष्णाप्रसाद, सीटू के हरियाणा राज्य उपाध्यक्ष सुरेंद्र सिंह, किसान सभा के हरियाणा राज्य अध्यक्ष फूलसिंह श्योकंद, एडवा की हरियाणा राज्य सचिव सविता और दूसरे लोगों ने इस सभा को संबोधित किया।

यह उप-यात्रा रोहतक में हांसी से चली मुख्य यात्रा में शामिल हो गयी। यह पदयात्रा विभिन्न गांवों से होते हुए निकली और उसके स्वागत में रास्ते में अनेक सभाएं भी आयोजित की गयीं। गांववासियों ने बुलंद नारों और भारी उत्साह तथा जोश के साथ पदयात्रा का स्वागत किया।

हर उम्र के लोग, किसान, मजदूर, युवा और छोटे व्यापारी बड़ी संख्या इस पदयात्रा के स्वागत के लिए आगे आए। अनेक लोग काफी लंबी दूरी तक इस पदयात्रा में शामिल भी हुए। गुरुद्वारों तथा गांवों के ग्रामीणों ने पदयात्रा में शामिल लोगों को भोजन तथा नाश्ता मुहैया कराया। ऐसे बुजुर्गों की संख्या काफी अधिक थी जो हांसी से टीकरी बॉर्डर तक इस पदयात्रा में शामिल रहे। मीलों तक पैदल चलने के कारण अनेक लोगों के पांवों में छाले पड़ गए थे, लेकिन इससे उनका उत्साह बिल्कुल भी कम नहीं हुआ।

19 मार्च को अखिल भारतीय किसान सभा-सीटू तथा अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन की दो और पदयात्राएं दिल्ली के सिंघू बॉर्डर तथा पलवल बॉर्डर के लिए शुरू हुईं। इनमें एक पदयात्रा शहीद भगतसिंह के गांव खटकड़ कलां से शुरू हुयी, जो पंजाब के नवांशहर जिले में स्थित है।

यह पदयात्रा हरियाणा के पानीपत तक एक वाहन जत्थे के रूप में पंहुची। खटकड़ कलां में शहीद भगतसिंह तथा अन्य शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। यहां सीटू अध्यक्ष के हेमलता ने सभा को संबोधित किया और वाहन जत्थे को झंडी दिखाकर रवाना किया। अखिल भारतीय किसान सभा के सह सचिव डा0 वीजू कृष्णन, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन के सह सचिव डा0 विक्रम सिंह और अखिल भारतीय किसान सभा के पंजाब राज्य उपाध्यक्ष सुखविंदरसिंह सेखों, सीटू राज्य सचिव चंद्रशेखर तथा अन्य लोग इस अवसर पर मौजूद थे।

जत्थे को झंडी दिखाते हुए के हेमलता ने जोर देकर कहा कि मजदूरों तथा किसानों की एकता ही यह सुनिश्चित करेगी कि आम जनता की कीमत पर कार्पोरेट के हितों को आगे बढ़ानेवाले भाजपा सरकार के कदमों को करारा जवाब मिले। जत्थे के वाहन शंभू बॉर्डर पर रुके, जहां आसपास के ग्रामीणों ने उनका स्वागत किया।

कुरुक्षेत्र तथा करनाल में रुकने, जहां समाज के हर तबके के लोग उनका उत्साहपूर्वक स्वागत करने के लिए आगे आए, के बाद यह जत्था रात में पानीपत पंहुचा। अखिल भारतीय किसान सभा, सीटू, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन तथा अन्य जनसंगठनों के नेताओं और बीकेयू जैसे विभिन्न किसान संगठनों के नेताओं ने भी सभाओं को संबोधित किया।

पानीपत में पदयात्रा में शामिल सभी लोग, जिनमें पंजाब तथा हरियाणा के आसपास के जिलों के सभी लोग शामिल थे, किसान भवन में रुके, जिसका प्रबंधन भारतीय किसान यूनियन (टिकैत) के हाथ में है। इस इमारत का निर्माण करने के पीछे विचार यही था कि शहर में आनेवाले किसानों को ठहरने की एक जगह मुहैया करायी जाए। अखिल भारतीय किसान सभा के आग्रह पर इस पदयात्रा में शामिल लोगों के लिए तमाम सुविधाएं मुहैया करायी गयीं।

20 मार्च को पानीपत से यह पदयात्रा शुरू हुयी। लोगों ने भारी उत्साह के साथ उसे रवाना किया। शहीद भगतसिंह की भतीजी गुरजीत कौर ने ए आर सिंधु, पी कृष्णाप्रसाद, जयभगवान, मेजरसिंह पुन्नेवाल, धर्मपाल सील तथा अन्य लोगों की मौजूदगी में पदयात्रा को झंडी दिखाकर रवाना किया। 65 किलोमीटर की यात्रा के बाद यह पदयात्रा 23 मार्च को सिंघू बॉर्डर पंहुची।

पदयात्रा में व्यवधान पैदा करने के भाजपा सरकार और स्थानीय भाजपायी नेतृत्व के तमाम प्रयासों के बावजूद बड़ी संख्या में लोग उसके समर्थन में आगे आए।

एक सभा को रद्द किया गया क्योंकि एक स्थानीय संगठनकर्ता, जो पदयात्रा का स्वागत करना चाहता था, पर यह दबाव बनाया गया कि वह पदयात्रा का स्वागत न करे। बहरहाल, उस क्षेत्र में भी पदयात्रा का भारी स्वागत हुआ।

पदयात्रियों का सबसे पहले कुरुक्षेत्र में चढ़ूनी जट्टा के पास रतनगढ़ में स्वागत किया गया, जहां स्थानीय ग्रामीणों ने किसानों के लिए दोपहर के भोजन की व्यवस्था की। पट्टी कलियाणा (समालखा) और गन्नौर में भी पदयात्रियों का ऐसा ही स्वागत हुआ। यहां मेजबानों ने उन पर फूल बरसाए और मिठाइयों तथा पानी से उनका स्वागत किया।

इस अवसर पर बड़ी संख्या में महिलाएं भी मौजूद थीं और वे

अगले प्वाइंट तक पदयात्रियों के साथ गयीं। समालखा के एक प्रमुख गुरुद्वारे ने पदयात्रियों के रहने तथा खाने की व्यवस्था की थी। हर गुजरनेवाले दिन के साथ पदयात्रियों की संख्या बढ़ती रही। करीब 400 लोग लगातार पदयात्रा में बने रहे। जबकि दूसरे लोग थोड़ी-थोड़ी दूरी पर यात्रा में शामिल होते रहे।

उत्तरप्रदेश तथा मध्यप्रदेश की तीसरी पदयात्रा 19 मार्च को मथुरा से शुरू हुयी और 90 किलोमीटर की यात्रा तय कर 23 मार्च को पलवल बॉर्डर पंहुची। अखिल भारतीय किसान सभा के महासचिव हन्नान मौल्ला ने झंडी दिखाकर इस पदयात्रा को रवाना किया।

इस अवसर पर आयोजित आम सभा को पी कृष्णाप्रसाद, अखिल भारतीय किसान सभा के उत्तरप्रदेश राज्य सचिव मुकुटसिंह, संगठन के मध्यप्रदेश राज्य सचिव रामनारायण कुररिया, मथुरा के नेता दिगंबर सिंह और अन्य लोगों ने संबोधित किया।

इस अवसर पर बोलते हुए हन्नान मौल्ला ने कहा कि इस ऐतिहासिक संघर्ष और किसानों की अभूतपूर्व एकता ने सरकार के कदमों का संकल्पबद्ध प्रतिरोध किया है और लोगों में यह उम्मीद जगायी है कि भाजपा सरकार के कदमों को मात दी जा सकती है।

सराय, मित्रोल तथा श्रीनगर जैसे विभिन्न गांवों में पदयात्रा का जोरदार स्वागत हुआ, जहां ग्रामीण बड़ी संख्या में पदयात्रियों का स्वागत करने के लिए आगे आए। पलवल शुगर मिल पर इस पदयात्रा का सहकारिता शुगर मिल के मजदूरों, क्षेत्र के किसानों और शुगर मिले के डायरेक्टर ने स्वागत किया।

सीटू के मजदूरों, मिड डे मील मजदूरों और सर्वकर्मचारी संघ के कर्मचारियों तथा अन्य लोगों ने पलवल में पदयात्रियों का स्वागत किया। अखिल भारतीय किसान सभा के संयुक्त सचिवों- एन के शुक्ल तथा बादल सरोज, वित्त सचिव पी कृष्णाप्रसाद, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन के सह सचिव विक्रम सिंह, उत्तर प्रदेश किसान सभा के अध्यक्ष भरत सिंह, सचिव मुकुट सिंह, दिगंबर सिंह, मध्यप्रदेश किसान सभा के सचिव रामनारायण कुररिया, बाबूराम, वीरेंद्र मलिक तथा अन्य लोगों ने इस पदयात्रा में सक्रिय रूप से भाग लिया और सभाओं को संबोधित किया।

टीकरी, सिंघू तथा पलवल बॉर्डरों पर पंहुचे पदयात्रियों का गगनभेदी नारों के साथ स्वागत हुआ। अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन के महासिचव बी वेंकट, सहसचिव विक्रम सिंह, एडवा की महासचिव मरियम ढ़वले, दिल्ली जनवादी महिला समिति की सचिव आशा शर्मा, सीटू सचिव ए आर सिंधु, अखिल भारतीय किसान सभा के सहसचिव बादल सरोज, वित्त सचिव पी कृष्णाप्रसाद और दूसरे नेता पदयात्रियों का स्वागत करने के लिए वहां उपस्थित थे।

भारी बाधाओं से पार पाते हुए पदयात्री इन पदयात्राओं में शामिल हुए। अनेकों के पांव में छाले पड़ गए थे। चिलचिलाती धूप ने भी उनके लिए भारी मुश्किलें पैदा की थीं, लेकिन उनका उत्साह और जोश ठंडा नहीं हुआ।

उनका यह जोश मजदूरों और किसानों के इस इस्पाती संकल्प को दिखा रहा था कि जब तक मजदूरविरोधी और किसानविरोधी कानूनों को निरस्त नहीं किया जाता, तब तक वे एक इंच भी पीछे हटनेवाले नहीं हैं। इन पदयात्राओं ने उनके इस विश्वास की पुनर्पुष्टि की कि यह संघर्ष विजयी होगा। □

केंद्रीय बजट 2021–22 पर अखिल भारतीय किसान सभा का बयान

झूठ और खुले निजीकरण पर सवार केंद्र सरकार ने किसानों की मांगों पर किया निराश

वर्ष 2021–22 के लिए आज (1 फरवरी को) पेश किए गए केंद्रीय वित्तीय बजट में, भारतीय कृषि के लिए कोई भी नहीं पेशकश नहीं है। उसने उन किसानों के विरोध प्रदर्शन की पूरी तरह अवमनाना की है, जो अपने खून–पसीने की उचित कीमत की मांग करते हुए देश भर में संघर्ष चला रहे हैं। वर्ष 2020–21 में कृषि के लिए बजटीय आवंटन 1,34,349 करोड़ रु0 था, जो वर्ष 2021–22 में घटकर 1,22,961 करोड़ रु0 रह गया है। मोटे तौर पर देखें तो भी यह कृषि के लिए आवंटन में कुल मिलाकर 8 फीसद की कमी है।

वर्ष 2019–20 तथा 2020–21 में, चावल तथा गेहूं की खरीद इसलिए ज्यादा हुयी थी क्योंकि खुले बाजार की कीमतें बेहद कम थीं और सरकार और ज्यादा अनाज खरीदने पर मजबूर हुयी। खरीद का स्तर फिर भी जरूरत से काफी कम रहा और इसके चलते ज्यादातर किसानों को अपनी उपज कम कीमतों पर बेचनी पड़ी। दूसरी ओर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के जरिए अनाजों का वितरण भी वर्ष 2020–21 में कोविड की स्थिति के चलते बढ़ा। अगर हम इस सब को एक तरफ कर दें तो वर्ष 2020–21 में कृषि संबंधी ज्यादातर योजनाओं पर खर्च में कमी आयी और वर्ष 2021–22 में इसमें बढ़ोतरी का कोई वादा नजर नहीं आता।

उदाहरण के लिए पीएम किसान योजना के लिए वर्ष 2020–21 में 75,000 करोड़ रु0 का बजट आवंटित किया गया था, लेकिन उसका वास्तविक खर्च सिर्फ 65,000 करोड़ रु0 ही था। इससे सरकार के इस दावे का खोखलापन सामने आ जाता है कि उसने पीएम किसान योजना का इस्तेमाल लॉकडाउन की अवधि के दौरान किसानों की मदद के लिए किया। इसके अलावा, वर्ष 2021–22 के लिए सिर्फ 65,000 करोड़ रु0 ही आवंटित किए गए हैं।

दूसरा उदाहरण यह है कि प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना में वर्ष 2019–20 में वास्तविक खर्च 2700 करोड़ रु0 था और वर्ष 2020–21 में बजटीय खर्च 4000 करोड़ रु0 था। लेकिन, वर्ष 2020–21 में वास्तविक खर्च 2563 करोड़ रु0 ही था, जो कि वर्ष 2019–20 के वास्तविक खर्च से भी कम ही था।

वित्त मंत्री ने यह झूठ बोलना जारी रखा है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) पहले ही उत्पादन लागत से 50 फीसद ज्यादा दिया जा रहा है। सच्चाई यह है कि सरकार ए2+एफएल लागत को उत्पादन लागत मानती है, न कि सी2 लागत को, जैसा कि स्वामीनाथन आयोग ने कहा था। यह भी एक सच्चाई है कि भारत में ज्यादातर किसान अभी भी खरीद नेटवर्क से बाहर हैं और न्यूनतम समर्थन मूल्य तक पंहुच से वंचित हैं।

बहरहाल, सरकार ने ऐसी किसी योजना की कोई घोषणा नहीं की है कि वह न्यूनतम समर्थन मूल्य या खरीद तक किसानों की पंहुच का कैसे विस्तार करेगी।

वास्तव में वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में पिछले वर्ष की खरीद की तुलना वर्ष 2013–14 की खरीद, जब खुले बाजार की कीमतें अनेक फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य से ज्यादा थीं और किसानों को सरकारी एजेंसियों को अपनी फसल बेचने की जरूरत नहीं पड़ी थी, से करने के जरिए भ्रमित करने की कोशिश की है। खुद वित्त मंत्री ने यह कहा था कि वर्ष 2020–21 में सिर्फ 1.54 करोड़ किसान ही धान तथा गेहूं के न्यूनतम समर्थन मूल्य से लाभान्वित हुए थे।

यह इस बात की स्वीकृति है कि ज्यादातर किसान, न्यूनतम समर्थन मूल्य पर की जानीवाली खरीद से लाभान्वित नहीं होते हैं। वास्तव में उनकी मध्यम अवधि योजना खरीद घटाने के लिए ही है, जो तीन कृषि कानूनों को लागू करने की उसकी जिद में दिखाई देती है।

खाद्य सब्सीडी में बढ़ोतरी, मात्र भ्रम ही है। सरकार पिछले कुछ वर्षों में एफसीआइ को अपने बकाए का भुगतान करने में विफल रही है और एफसीआइ को एनएसएसएफ से ऊंची ब्याज दरों पर ऋण लेने के लिए मजबूर करती रही

है। यह स्वागत योग्य है कि बजट ने एफसीआइ को ऋणों से न लादने के अपने इरादे की घोषणा की है, लेकिन सरकार को एफसीआइ को जिस पिछले बकाए का भुगतान करना है, उसको लेकर बजट खामोश है।

जब तक इस बकाए का भुगतान नहीं होता, तब तक एफ सीआइ की वित्तीय वहनीयता दबाव में रहेगी। यह देखना होगा कि क्या सरकार वर्ष 2021–22 में एफसीआइ के प्रति अपने इस उत्तरदायित्व को पूरा करती है या नहीं।

बजट मौद्रीकरण के बहाने से और ज्यादा निजीकरण का रोडप्लान ही पेश करता है। सार्वजनिक बुनियादी ढ़ांचे के निजीकरण में नाफेड द्वारा संचालित वेयरहाउस भी शामिल हैं। यह साइलोज (भंडारों) का निर्माण करने तथा उनके प्रबंधन के लिए फूड कार्पोरेशन ऑफ इंडिया और अडानी लॉजिस्टिक्स के बीच, पहले से ही चल रहे समझौतों की निरंतरता में ही है।

इसके अलावा केंद्र सरकार ने 'ऑपरेशन ग्रीन्स' योजना को 22 जल्द खराब होनेवाली वस्तुओं तक बढ़ाने की घोषणा की है। यह योजना एग्री लॉजिस्टिक्स को प्रोत्साहित करने के लिए ऋण सब्सीडी मुहैया कराती है, जिस पर अभी मौटे तौर पर एग्रो आधारित कंपनियों का ही नियंत्रण है। इसलिए, केंद्रीय बजट एग्री बिजनेस की अगुवाईवाले बुनियादी ढ़ांचागत विकास का विजन ही मुहैया कराता है।

बजट भाषण में बुनियादी ढ़ांचागत विकास पर काफी जोर दिया गया है। एक बार फिर यह एक खोखला दावा ही है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना या ग्रामीण क्षेत्रों में प्रधानमंत्री आवास योजना के लिए वास्तविक आवंटन, पिछले करीब दो वर्षों से जैसा था, वैसा ही बना रहा है और उसके लिए बजटीय आवंटन में कोई बढ़ोतरी नहीं हुयी है।

निजी भागीदारी के जरिए व्यापक पैमानेवाली बुनियादी ढ़ांचागत परियोजनाओं पर फोकस के साथ, इस बजट में भूमि अधिग्रहण तथा मुआवजे पर पूरी तरह खामोशी साधे रखी गयी है। जिन हाईवे परियोजनाओं की घोषणा की गयी है, उनके लिए कृषि जमीनों का बड़े पैमाने पर अधिग्रहण किए जाने की जरूरत होगी।

ग्रामीण भारत में बेरोजगारी, सेंटर फॉर मोनिटरिंग इंडियन इकोनोमी (सीएमआइई) के अनुसार दिसंबर 2020 में 9 फीसद थी। इन हालात को देखते हुए इसकी कोई माफी नहीं हो सकती है कि वित्त मंत्री के भाषण में मनरेगा का एक बार भी जिक्र तक नहीं है। कोविड के दौरान ग्रामीण गरीबों तथा घर लौटे प्रवासी मजदूरों के लिए, यह योजना जीवनरेखा साबित हुयी थी। वर्ष 2021–22 के लिए इस योजना की खातिर बजटीय अनुमानों में, वर्ष 2020–21 के संशोधित अनुमानों के मुकाबले 34 फीसद की भारी कमी आयी है।

वास्तव में अगर हम वर्ष 2019–20 के वास्तविक खर्चों (71,686 करोड़ रु0) की तुलना वर्ष 2021–22 के बजटीय खर्च (73,000 करोड़ रु0) से करें तो वास्तविक अर्थ में इस खर्च में कमी ही आयी है। बजट, सरकार के लिए मनरेगा के रोजगार दिवसों को बढ़ाकर 150 दिन करने का बहुत अच्छा अवसर था। लेकिन, सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया है कि उसका ऐसा कोई इरादा नहीं है। इसका निश्चित रूप से रोजगार दिवसों के सृजन और साथ ही साथ सार्वजनिक बुनियादी ढ़ांचे के निर्माण पर प्रभाव पड़ता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मांग बनती।

इस बजट में भारत के पशुपालक किसानों के साथ भी काफी बुरा व्यवहार किया गया है। इससे, सरकार का दोमुंहापन ही सामने आता है, जिसके प्रवक्ता 'गोमाता' के रूप में पशुधन की भूमिका का गुणगान करते रहते हैं। पशुपालन तथा डेयरी विभाग के लिए वास्तविक खर्च, वर्ष 2019–20 में 2706 करोड़ रु0 था। वर्ष 2020–21 में यह घटकर 2630 करोड़ रु0 रह गया। वर्ष 2021–22 के बजट में इसके लिए, 3057 करोड़ रु0 का आवंटन किया गया है, जो वास्तविक अर्थों में कोई बढ़ोतरी नहीं है।

कुल मिलाकर ऐसा लगता है कि सरकार किसान जनता को निचोड़ने की रणनीति का ही अनुसरण कर रही है। कृषि या प्रमुख नयी योजनाओं के लिए कोई महत्वपूर्ण अतिरिक्त आवंटन नहीं किया गया है। कोविड लॉकडाउन की अवधि के दौरान, भारतीय किसान ने देश में खाद्य सुरक्षा बनाए रखने के लिए अपनी उदाहरणीय प्रतिबद्धता का परिचय दिया था। बहरहाल, सरकार ने इसके बदले उन्हें कुछ भी नहीं दिया। कृषि के लिए आवंटनों में एक अच्छी–खासी बढ़ोतरी की अपेक्षा थी, लेकिन सरकार ने किसान जनता को निराश ही किया।

महाराष्ट्र : जबर्दस्त जन कार्रवाइयों ने किया देशव्यापी किसान संघर्ष को और मजबूत

-अशोक ढवले

तीन कृषि कानूनों को निरस्त करने और फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) तथा खरीद की गारंटी करनेवाले कानून की मांग को लेकर चल रहे देशव्यापी किसान संघर्ष को और मजबूत करने के लिए, महाराष्ट्र में गत 23 से 26 जनवरी तक विशाल जन कार्रवाइयों का आयोजन किया गया। राजनीतिक रूप से बेहद महत्वपूर्ण इन कार्रवाइयों को मुख्यधारा के ज्यादातर राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय मीडिया ने शानदार ढ़ंग से कवर किया।

कार्रवाई का कार्यक्रम

इस आंदोलन का नेतृत्व करनेवाले मोर्चे का नाम संयुक्त शेतकरी कामगार मोर्चा (एसएसकेएम-महाराष्ट्र) रखने का निर्णय लिया गया था।

कार्रवाई के जो कार्यक्रम तय किए गए थे, वे इस प्रकार थे:

14-15 जनवरी: कृषि कानूनों तथा श्रम संहिताओं का सार्वजनिक दहन; **18 जनवरी**: महिला किसान दिवस; **23 जनवरी**: नेताजी सुभाष चंद्र बोस वर्षगांठ-इसी दिन किसानों को वाहनों से अपने-अपने जिलों से मुंबई के लिए रवाना होना था, जहां महापड़ाव का आयोजन किया जाना था; **24-26 जनवरी**: मुंबई के आजाद मैदान में किसानों के महापड़ाव का आयोजन; **25 जनवरी**: महाराष्ट्र के राजभवन पर विशाल रैली का आयोजन और **26 जनवरी**: आजाद मैदान में गणतंत्र दिवस के मौके पर राष्ट्रीय ध्वजारोहण।

मुख्य मांगें

इस संघर्ष की मुख्य मांगें थीं: तीन कृषि कानूनों तथा चार श्रम संहिताओं को निरस्त करो; किसानों की फसलों के लाभकारी न्यूनतम समर्थन मूल्य तथा खरीद की गारंटी के लिए एक केंद्रीय कानून बनाओ; बिजली (संशोधन) विधेयक को वापस लो, किसानों तथा खेतमजदूरों को केंद्र सरकार नियमित पेंशन दे, जनविरोधी नयी शिक्षा नीति को वापस लो।

कुछ मुद्दे राज्य सरकार से भी जुड़े हुए थे। ये मुद्दे इस प्रकार थे: महात्मा फुले ऋण माफी योजना को लागू करो; वनाधिकार कानून को लागू करो और वन भूमि जोतनेवालों के नाम करो; मंदिरों की जमीनों और चारागाहों की जमीनों आदि को जोतनेवालों के नाम करो; पूर्ववर्ती भाजपा राज्य सरकार द्वारा बनाए गए 2018 के भूमि अधिग्रहण कानून को निरस्त करो और 2014 के पुराने कानून को बहाल करो।

किसान सभा का मुंबई वाहन मार्च

अखिल भारतीय किसान सभा (एआइकेएस) की महाराष्ट्र राज्य इकाई ने 23 जनवरी को नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जन्मदिवस पर नासिक से मुंबई के लिए अपना राज्य स्तरीय वाहन मार्च शुरू किया। इस मार्च में राज्य के 21 जिलों के 15,000 किसान शामिल थे। यह मार्च सैकड़ों टैंपुओं, पिकअपों तथा अन्य वाहनों से नासिक के गोल्फ क्लब मैदान से शुरू हुआ। मार्च शुरू होने से पहले एक विशाल आम सभा का आयोजन किया गया था, जिसे सभी जन संगठनों के नेताओं ने संबोधित किया।

23 जनवरी की रात को मार्च में शामिल लोग इगतपुरी के नजदीक घंटादेवी में रुके। 24 जनवरी की सुबह उन्होंने पैदल ही मार्च शुरू किया और नासिक तथा ठाणे जिलों को जोड़नेवाले कसाराघाट की 8 किलोमीटर की दूरी पैदल तय की। इस मार्च में बड़ी संख्या में महिला किसान और युवा किसान शामिल थे। तीन घंटे तक चला यह पैदल मार्च सुबह 9 बजे शुरू हुआ था और दोपहर 12 बजे यह संपन्न हुआ। कसाराघाट को पैदल पार करनेवाले इन किसानों के वाहन उनके पीछे चल रहे थे।

कसाराघाट मार्च तथा वाहन जत्थे का नेतृत्व अखिल भारतीय किसान सभा के अध्यक्ष अशोक ढवले, राज्य अध्यक्ष किशन गूजर, राज्य महासचिव अजित नवले, राज्य पदाधिकारी-सुनील मालुसरे, बरक्या मंगत, रतन बुधार, रादका कालंगड़ा, सावलीराम पवार, सुभाष चौधरी, दादा रायपुरे, अर्जुन एडी, शंकर सिदाम, उद्धव पॉल, उमेश देशमुख, उदय नारकर, मानिक अवाघडे, सीटू राज्य सचिव तथा सी पी आइ (एम) विधायक विनोद निकोले, एडवा महासचिव मरियम ढवले तथा राज्य महासचिव प्राची हातिव्लेकर, अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन के राज्य अध्यक्ष मारुति खंडारे, डीवाइएफआइ की राज्य महासचिव प्रीति शेखर, एसएफआइ राज्य अध्यक्ष बालाजी कालेटवाड तथा राज्य महासचिव रोहिदास जाधव और अखिल भारतीय किसान सभा की राज्य काउंसिल के दूसरे अनेकों नेता कर रहे थे।

इसके बाद यह वाहन जत्था मुंबई की ओर रवाना हुआ। रास्ते में इगतपुरी तथा शाहपुर तहसीलों में सीटू से संबद्ध सैकड़ों फैक्टरी मजदूरों ने अपने किसान साथियों का उन पर फूल बरसा कर गर्मजोशी के साथ स्वागत किया।

कल्याण-भिवंडी चौराहे पर पी के लाली, सुनील चव्हाण,

परवीन खान तथा ज्योति ताइडे के नेतृत्व में सी पी आइ (एम), सीटू तथा डीवाइएफआइ ने और अमृतवेला गुरुद्वारे ने मार्च का स्वागत किया और मार्च में शामिल सभी किसानों को हजारों की तादाद में भोजन के पैकेट दिए।

जत्थे ने दोपहर को मुलुंड चेक नाका से मुंबई में प्रवेश किया। विखरोली के कन्नामवार नगर में सी पी आइ (एम), सीटू, डीवाइएफआइ तथा एडवा के सैकड़ों कार्यकर्ताओं ने, पार्टी की केंद्रीय कमेटी सदस्य महेंद्रसिंह तथा हेमकांत सामंत के नेतृत्व में मार्च में शामिल लोगों का स्वागत किया।

इसके बाद मार्च आजाद मैदान की ओर बढ़ गया, जहां एसएसकेएम द्वारा आजाद मैदान में आयोजित संयुक्त धरना संघर्ष में शामिल लोगों ने मार्च का जोरदार स्वागत किया।

मुंबई में विशाल संयुक्त कन्वेंशन

25 जनवरी को गणतंत्र दिवस के पूर्वसंध्या पर एसएसकेएम ने मुंबई के हृदयस्थल प्रख्यात आजाद मैदान में एक विशाल संयुक्त राज्यस्तीय कन्वेंशन का आयोजन किया, जिसमें करीब 40,000 किसानों, मजदूरों तथा मेहनतकश अवाम के अन्य तबकों ने भाग लिया। हजारों की तादाद में महिलाएं तथा युवा भी इस कन्वेंशन में शामिल थे। 24 जनवरी को शुरू हुए महापड़ाव का यह दूसरा दिन था।

इस कन्वेंशन का राजनीतिक महत्व यह था कि महाराष्ट्र में वर्षों बाद पहली बार ऐसा हो रहा था कि भाजपा का विरोध करनेवाली सभी राजनीतिक तथा सामाजिक शक्तियां एक साथ एक मंच पर आयी थीं।

इस कन्वेंशन के वक्ताओं में पूर्व केंद्रीय मंत्री तथा एनसीपी प्रमुख शरद पवार, कांग्रेस के राज्य प्रमुख तथा राज्य के राजस्व मंत्री बालासाहब थोराट, अखिल भारतीय किसान सभा के महासचिव हन्नान मौल्ला, पीडब्लूपी महासचिव एमएलसी जयंत पाटिल, अखिल भारतीय किसान सभा के अध्यक्ष अशोक ढवले, पत्रकार पी साइनाथ, तीस्ता सीतलवाड़, शिवसेना नेता राहुल लोंधे, सी पी आइ (एम) राज्य सचिव नरसैया आडम, समाजवादी पार्टी के नेता विधायक अबु असीम आजमी, सी पी आइ राज्य सचिव तुकाराम भस्मे, आप सचिव धनंजय शिंदे, आरपीआइ (कवाडे) नेता गणेश उन्हावने, एडवा महासचिव मरियम ढ़वले, अखिल भारतीय किसान सभा के राज्य महासचिव अजित नवले, सीटू राज्य उपाध्यक्ष विवेक मोंटेरियो, एनएपीएम नेता मेधा पाटकर, मुंबई उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश बी जी कोल्से पाटिल, हम भारत के लोग के नेता फिरोज मीठीबोरावाला, एमएफयूसीटीओ की अध्यक्ष तापी मुखोपाध्याय, एनसीपी नेता विद्या चव्हाण, कांग्रेस के मुंबई प्रमुख विधायक भाई जगताप, सर्वहारा जन आंदोलन की नेता उल्का महाजन, काश्तकारी संगठन के नेता ब्रियन लोबो, सत्यशोधक शेतकरी सभा के नेता किशोर धामले तथा दूसरे अनेक नेताओं के नाम शामिल हैं। राजू कोरडे, एस के रेगे, मिलिंद रानाडे तथा शैलेंद्र कांबले के अध्यक्षमंडल ने, कन्वेंशन की अध्यक्षता की।

कन्वेंशन को संबोधित करते हुए शरद पवार ने खुलकर भाजपा निजाम की और उनके तीन कृषि कानूनों की आलोचना की और एमएसपी गारंटी कानून बनाए जाने पर जोर दिया। उन्होंने चेतावनी दी कि अगर केंद्र सरकार ने किसानों को बर्बाद करने की कोशिश की तो, किसान ही उसे बर्बाद कर देंगे।

बालासाहब थोराट ने कृषि कानूनों को लेकर मोदी सरकार पर जोरदार हमला बोला। उनका कहना था कि राज्य सरकार इन कानूनों के प्रभाव को निरस्त करने तथा किसानों को संरक्षण देने के लिए एक कानून बनाने के बारे में, गंभीरता से विचार कर रही है।

कन्वेंशन को संबोधित करते हुए हन्नान मौल्ला ने दिल्ली के आसपास पिछले दो महीने से चल रहे ऐतिहासिक किसान संघर्ष के अनुभव सुनाए और इस संघर्ष के निपटने के मामले में मोदी निजाम के दीवालियापन तथा संवेदनहीनता को बेनकाब कर दिया।

पी साईनाथ ने कन्वेंशन को संबोधित करते हुए इस तथ्य पर जोर दिया ये तीन कृषि कानून न सिर्फ किसानों पर हमला है बल्कि जनता के तमाम तबकों पर हमला हैं। अपनी बात को साबित करने के लिए उन्होंने अनेक उदाहरण भी दिए।

कन्वेंशन को संबोधित करते हुए अशोक ढ़वले ने कृषि कानूनों तथा श्रम संहिताओं के कार्पोरेटपरस्त तथा नवउदारवादपरस्त चरित्र पर हमला बोला और आरोप लगाया कि मोदी सरकार, देश को बेचने की कोशिश कर रही है। उनका कहना था कि अब वह हमारी कृषि तथा जमीन को निशाना बना रही है।

राज्यपाल भागा किसानों ने ज्ञापन फाड़ा

कन्वेंशन के बाद राजभवन के लिए एक विशाल रैली शुरू हुयी। जब इस बात का पता चला कि एसएसकेएम प्रतिनिधिमंडल को समय देने के बावजूद, राज्यपाल कोशियारी गोवा चले गए हैं तो लोग बेहद नाराज हो गए। एसएसकेएम की फौरन ही एक बैठक हुयी और राज्यपाल से मिलने के लिए जो प्रतिनिधिमंडल जानेवाला था, उसे रद्द कर दिया गया और राज्यपाल को देने के लिए जो ज्ञापन तैयार किया गया था, उसे सार्वजनिक रूप से फाड़ा गया।

26 जनवरी की सुबह नासिक जिले की रहनेवाली 73 वर्षीय आदिवासी महिला, यमुनाबाई जाधव ने आजाद मैदान में राष्ट्रीय झंडा फहराया। यमुनाबाई जाधव दो वर्ष पहले अखिल भारतीय किसान सभा के नेतृत्व में नासिक से मुंबई तक आयोजित लॉन्ग मार्च में शामिल थीं और 200 किलोमीटर का रास्ता उन्होंने पैदल चलते हुए तय किया था। महाराष्ट्र विधानसभा अध्यक्ष नाना पटोले, एसएसकेएम नेताओं के साथ इस ध्वजारोहण के लिए खासतौर से मौजूद थे। □

ग्वालियर : धरने पर संघी हमले के बाद किसान आंदोलन ने और पकड़ा जोर

ग्वालियर। 31 जनवरी को शाम के वक्त आरएसएस के गुंडों ने क्रांतिकारी हिंदू सेना का नाम धरा और ग्वालियर के फूलबाग चौराहे पर चल रहे संयुक्त किसान धरने पर हमला बोल दिया। हमले में जनवादी महिला समिति की जिला सचिव प्रीति सिंह और एसएफआइ की जिला सचिव आकांक्षा धाकड़ को उन्होंने निशाना बनाया। दोनों के चोटें आई हैं। गुंडे 50, 60 की संख्या में समूह बनाकर आए और धरना स्थल पर लगीं गांधी, भगत सिंह और बाबा साहब अंबेडकर की तस्वीरें फाड़ दीं। इससे पहले कि वे कुछ और उत्पात मचाते, भारी संख्या में आसपास की जगहों से लोग आ गए और गुंडे भाग खड़े हुए। इनमें से कुछ की शिनाख्त कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह तोमर के खास लोगों के रूप में हुई है, जिनके विरुद्ध घंटों की हील-हुज्जत के बाद पुलिस ने रिपोर्ट दर्ज की, हालांकि बाद में पुलिस ने खुद हमले के शिकार आंदोलनकारियों पर भी फर्जी मुकदमे बना दिए।

गौरतलब है कि चम्बल संभाग के बाकी जिलों की तरह पलवल बॉर्डर की जिम्मेदारी निबाहने के साथ ग्वालियर में भी 1 जनवरी से गांधी प्रतिमा के सामने फूलबाग चौराहे पर अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति के बैनर तले अनिश्चितकालीन धरना चल रहा है, जिसमें अनेकों किसान तथा सामाजिक संगठन शामिल हैं।

इस घटना की खबर मिलते ही अखिल भारतीय किसान सभा के अध्यक्ष एवं महासचिव अशोक ढवले, हन्नान मौल्ला ने तीखी भर्त्सना की और इसे पत्रकारों की गिरफ्तारी के साथ जोड़ते हुए ऐसी तानाशाहीपूर्ण हरकत बताया है जिसका एकमात्र मकसद जनता के अंदर डर पैदा करना है, ताकि किसानों के समर्थन में आमजन और किसान अपनी मांगों के लिए आंदोलन नहीं कर सकें।

इसका ग्वालियर में व्यापक विरोध हुआ और इस पर इतनी तीखी प्रतिक्रिया हुई की दो फरवरी को पहले डबरा और उसके बाद 3 फरवरी को आंदोलन स्थल फूलबाग चौराहे पर हुई किसान पंचायतों में हजारों लोग जुटे। इन दोनों जगहों पर मंजूर प्रस्तावों में हमले की भर्त्सना की गई, आंदोलन जारी रखने का संकल्प लिया गया और संयुक्त किसान मोर्चा के आह्वान के तहत, 6 फरवरी को जिले भर में 6 स्थानों पर चक्का जाम करने का संकल्प लिया।

इस विरोध सभा में दो दर्जन से ज्यादा संगठनों के लोग शामिल हुए, जिनमें अखिल भारतीय किसान सभा के संयुक्त सचिव बादल सरोज, सीपीएम राज्य सचिव जसविंदर सिंह, सीटू राज्य अध्यक्ष रामविलास गोस्वामी, जमस राज्य अध्यक्ष नीना शर्मा तथा किसान मजदूर संघर्ष समिति मुलताई के नेता, डॉ सुनीलम आदि शामिल थे। □

कर्नाटक में भी चल रहा है दूसरा स्वतंत्रता संग्राम-यू बसवराज

-वसंत के

देश में दूसरा स्वतंत्रता संग्राम चल रहा है। यह एक ऐसी सरकार के खिलाफ चलाया जा रहा है, जो किसानों की जमीनों को और पूरे कृषि क्षेत्र को, भारतीय तथा बहुराष्ट्रीय कार्पोरेट घरानों के हवाले करने के लिए कानून बना रही है। यह दूसरा स्वतंत्रता संग्राम कर्नाटक में भी चलाया जा रहा है। जब तक केंद्र तथा राज्य सरकारें काले कानूनों को वापस नहीं लेती हैं, तब यह संग्राम चलता रहेगा।' यह कहना था (अखिल भारतीय किसान सभा से संबद्ध) केपीआरएस के महासचिव और सी पी आइ (एम) के कर्नाटक राज्य महासचिव, यू बसवराज का। वे 'संयुक्त होराटा कर्नाटक' द्वारा आयोजित किए जानेवाले 'विधान सौध चलो' कार्यक्रम के सिलसिले में गत 22 मार्च को बंगलौर के फ्रीडम पार्क में आयोजित विशाल रैली को संबोधित कर रहे थे। किसानविरोधी तथा मजदूरविरोधी काले कानूनों को वापस लिए जाने की मांग को लेकर इस कार्यक्रम का आयोजन किया जा रहा है। 'संयुक्त होराटा कर्नाटक' वास्तव में राज्य के सभी किसान तथा खेतमजदूर संगठनों, ट्रेड यूनियनों और दलित संगठनों का एक गठबंधन है। संयुक्त होराटा कर्नाटक ने पहले भी इसी वर्ष 26 जनवरी को जन-परेड का आयोजन किया था।

उनका कहना था कि कृषि क्षेत्र में कार्पोरेटों के प्रवेश की यह प्रक्रिया 1994 में तब शुरू हुयी थी जब भारत ने कृषि संबंध गैट समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। एक के बाद एक सत्ता में आनेवाली सरकारों ने विभिन्न कदमों की श्रृंखलाओं के साथ इस समझौते को लागू किया है। ये तीन काले कानून कृषि के तमाम पक्षों को कार्पोरेट के हवाले करने और किसानी को नष्ट करने के ऐसे कदम हैं, जो इन्हीं श्रृंखलाओं का हिस्सा हैं। इसलिए, कार्पोरेटों का जो शासन थोपा जा रहा है, उसी के खिलाफ यह दूसरा स्वतंत्रता संग्राम शुरू हुआ है। उनका कहना था कि यह याद रखना चाहिए कि प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1793 में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा बनाए गए कानूनों के खिलाफ किसानों ने चलाया था। यह वे कानून थे जिनके जरिए जमीन के उनके मालिकाना हक छीन लिए गए थे और जमीनें पूरी तरह से जमींदारों तथा जागीरदारों के हवाले कर दी गयी थीं। पहले ये कानून बंगाल में बनाए गए थे और बाद में इन्हें पूरे ब्रिटिश इंडिया में लागू कर दिया गया था। उन्होंने कहा कि किसानों ने अपने अनुभव से और संघर्षों की श्रृंखलाओं के जरिए यह समझ लिया था कि जब तक ब्रिटिश शासन खत्म नहीं होगा तब तक 'जोतनेवाले को जमीन' नहीं मिलेगी। इसीलिए, उन्होंने प्रथम स्वतंत्रता संघर्ष में भाग लिया और अंतत: ब्रिटिश शासन को खत्म करने में सफलता पायी। बसवराज ने पूरे विश्वास से कहा किसान इस दूसरे स्वतंत्रता संग्राम में भी सफल होंगे।

रैली से पहले बंगलौर सिटी रेलवे स्टेशन से किसानों और मजदूरों का एक विशाल जुलूस निकला, जो फ्रीडम पार्क में हुयी विशाल रैली में अपने उत्कर्ष पर पंहुचा। अनुमान है कि कोई 10,000 किसानों और मजदूरों ने इस जुलूस तथा रैली में भाग लिया। संयुक्त किसान मोर्चा के केंद्रीय नेताओं डा0 दर्शनपाल, युद्धवीरसिंह तथा राकेश टिकैत ने इस रैली में भाग लिया। रैली को संबोधित करते हुए टिकैत ने विधान सौध में अपनी फसलें बेचने का किसानों से आह्वान किया। उनका कहना था कि अगर पुलिस आपको रोके तो उसे बता दो कि प्रधानमंत्री मोदी ने घोषणा की है कि किसानों को एपीएमसी के बाहर कहीं भी उनकी फसलों का तय न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलेगा। अगर वह आपको गिरफ्तार करे और आपको थाने ले जाए तो वहां भी अपनी फसलें बेचना जारी रखें। और अगर आपको जेल में डाल दिया जाए तो भी आप अपनी फसलें बेचना जारी रखें। उन्होंने कहा कि उत्तरप्रदेश में किसानों ने जिलाधिकारी कार्यालयों पर अपना धान और गन्ना बेचने का आंदोलन शुरू किया है। उन्होंने कर्नाटक के किसानों का आह्वान किया कि बंगलौर को उसी तरह घेर लो जैसे उत्तर भारत के किसानों ने दिल्ली को घेर रखा है।

रैली को संबोधित करते हुए युद्धवीरसिंह ने भाजपा के मुठ्ठी भर चावल दान के देने के 'नए नाटक' का जिक्र किया। उन्होंने कहा कि यह उनकी चावल को धर्म से जोड़ने और धर्म को वोट से जोड़ने की कोशिश है। उन्होंने कहा कि 'भाजपा को यह बता देने की जरूरत है कि मुठ्ठी भर चावल क्यों अगर आपएमएसपी सुनिश्चित करने के लिए कानून बना देते हो तो हम आपको और चावल देंगे।'

सीटू राज्य अध्यक्ष तथा सी पी आइ (एम) के वरिष्ठ नेता एस वरलक्ष्मी उस अध्यक्षमंडल का हिस्सा थे, जो रैली का संचालन कर रहा था। अखिल भारतीय खेतमजदूर यूनियन की कर्नाटक राज्य इकाई के अध्यक्ष तथा वरिष्ठ सी पी आइ (एम) नेता नित्यानंद स्वामी, केआरआरएस तथा हसिरू सेने के नेता कोदिहल्ली चंद्रशेखर और एक अन्य किसान नेतागण चुक्की नंजुदस्वामी, आरकेएस के दिवाकर तथा अभिनेता चेतन भी मंच पर उपस्थित थे और उन्होंने भी रैली को संबोधित किया। अखिल भारतीय किसान सभा से संबद्ध केपीआरएस द्वारा किसानविरोधी और मजदूरविरोधी कानूनों पर प्रकाशित एक पुस्तक का भी इस अवसर पर लोकार्पण किया गया। राज्य सरकार की ओर से कृषि मंत्री बी सी पाटिल नेताओं से मिलने के लिए रैलीस्थल पर आए। उन्हें किसानों का मांगपत्र पढ़कर सुनाया गया और उन्हें ज्ञापन दिया गया।

बंगलौर के विधान सौध चलो कार्यक्रम से पहले संयुक्त किसान मोर्चा के तीन केंद्रीय नेताओं-डा0 दर्शनपाल, युद्धवीरसिंह तथा राकेश टिकैत ने पश्चिमी कर्नाटक के शिवमोगा में और उत्तरी कर्नाटक में हावेरी में आयोजित किसान महापंचायतों में भी भाग लिया। इन किसान महापंचायतों में हजारों किसानों ने भाग लिया। □

कृषि विरोधी नीतियों के खिलाफ छत्तीसगढ़ में भी शुरू हुई किसान पंचायतें

कानून वापस नहीं, तो करेंगे सरकार की वापसी के लिए आंदोलन—बादल सरोज

किसान विरोधी काले कानून अमेरिका और अडानी-अंबानी के इशारे पर बनाए गए हैं। अमेरिका, फिलीपींस, ब्राज़ील सहित जितने भी देशों ने ऐसे कानूनों को लागू किया है, वहां के किसान बर्बाद हो गए हैं और उनकी भूमि पर कॉरपोरेटों ने कब्जा कर लिया है। भारत में भी यही होगा। आज तक मोदी सरकार किसानों को यह समझा नहीं पाई है कि इन कानूनों में अच्छा क्या है। इसलिए, यदि ये सरकार कृषि विरोधी कानून वापस नहीं लेगी, तो इस सरकार की वापसी के लिए ही पूरे देश में आंदोलन किया जाएगा।

ये बातें अखिल भारतीय किसान सभा के संयुक्त सचिव बादल सरोज ने कोरबा जिले के बांकीमोंगरा क्षेत्र में मड़वाढोढ़ी गांव में, जशपुर जिले के पत्थलगांव क्षेत्र में पातरगांव में और बस्तर जिले के दरभा में आयोजित किसान पंचायतों को संबोधित करते हुए कहीं। तीनों जगह आयोजित इन पंचायतों में सैकड़ों किसानों ने हिस्सा लिया। उन्होंने कहा कि जो सरकार आज तक अपनी मंडियों में ही किसानों को न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलना सुनिश्चित नहीं कर पाई है, वह किसानों को अपनी फसल कहीं भी अच्छे भाव में बेचने की आज़ादी देने का झूठा दावा कर रही है। वास्तव में किसानों को अडानी-अंबानी और कॉर्पोरेट कंपनियों की गुलामी की जंजीरों में बांधा जा रहा है। इन कृषि कानूनों का दुष्परिणाम यह होने वाला है कि उनकी जमीन अंबानी की कॉर्पोरेट कंपनियों के हाथों चली जायेगी और फसल अडानी की निजी मंडियों में कैद हो जाएगी।

अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति और संयुक्त किसान मोर्चा द्वारा मोदी सरकार की कृषि विरोधी नीतियों के खिलाफ चलाये जा रहे देशव्यापी आंदोलन के क्रम में छत्तीसगढ़ में किसान पंचायतों के आयोजन का सिलसिला शुरू हो गया है। इन पंचायतों को बादल सरोज के साथ छत्तीसगढ़ किसान सभा के राज्य अध्यक्ष संजय पराते ने भी संबोधित किया। उनके अलावा छत्तीसगढ़ किसान आंदोलन के सुदेश टीकम और छत्तीसगढ़ बचाओ आंदोलन के आलोक शुक्ला सहित किसान सभा नेता प्रशांत झा, दीपक साहू, जवाहर सिंह कंवर, नंदलाल कंवर, प्रताप दास, सीटू नेता जनाराम कर्ष, माकपा पार्षद सुरती ने मड़वाढोढा की पंचायत को, जगदीश सिदार, नेहरू लकड़ा, जयनाथ केराम, आनंद नाग आदि ने पातरगांव की पंचायत को और संतोष यादव, शिवा नाग आदि स्थानीय किसान नेताओं ने दरभा की पंचायत को संबोधित किया। छत्तीसगढ़ किसान सभा ने अगले महीने ऐसी 20 और किसान पंचायतों के आयोजन का फैसला किया है।

छत्तीसगढ़ किसान सभा के नेता संजय पराते ने इन किसान पंचायतों को संबोधित करते हुए कहा कि सी-2 लागत का डेढ़ गुना समर्थन मूल्य देने और किसानों की आय दुगनी करने का वादा, मोदी सरकार का था। सात साल बाद भी वह लाभकारी समर्थन मूल्य देने के लिए तैयार नहीं है

और किसानों की आय में दो रुपये की भी वृद्धि नहीं हुई है। इस कारण किसानों की आत्महत्याएं डेढ़ गुनी बढ़ गई हैं। इसलिए, समर्थन मूल्य की घोषणा ही काफी नहीं है, समर्थन मूल्य पर फसल की खरीदी भी जरूरी है और उसके लिए कानून बनाना जरूरी है। पराते ने कहा कि ऐसा नहीं होने पर कम कीमत में इसी फसल को किसानों से खरीदकर कॉर्पोरेट गरीब जनता को मनमाने भाव पर बेचकर अकूत मुनाफा कमाएंगे, क्योंकि अनाज की सरकारी खरीदी न होने से राशन प्रणाली भी खत्म हो जाएगी। इस प्रकार, कुल मिलाकर ये कानून देश की खाद्यान्न सुरक्षा और आत्मनिर्भरता को खत्म करेंगे।

अन्य किसान नेताओं ने भी तीनों किसान विरोधी काले कानूनों के दुष्प्रभावों के बारे में विस्तार से बताया और कहा कि यदि इस आंदोलन में हम लोग शामिल नहीं हुए, तो आने वाली पीढ़ी हमें माफ नहीं करेगी। विस्थापन और पुनर्वास के मुद्दे भी इन पंचायतों में उभरे। वक्ताओं ने बताया कि किस तरह सरकार उद्योगों के नाम पर जंगलों को समाप्त करते जा रही है और जिनकी जमीन उद्योगों के लिए हड़पी जा रही है, उन्हें विस्थापन के बाद रोजगार, मुआवजा और पुनर्वास के लिए घुमाया जाता है। उन्होंने कहा कि किसान आंदोलन को मजबूत बनाने के साथ ही छत्तीसगढ़ में वन भूमि में कबिजों को वनाधिकार पट्टा दिलाने, पेसा कानून का कड़ाई से पालन कराने, भू-विस्थापितों को मुआवजा, रोजगार और बेहतर पुनर्वास की व्यवस्था, खनन से जुड़े मुद्दों और उद्योगों के नाम पर ली गई जमीनों को मूल खातेदार किसानों को वापस करने और किसानों के फौती नामांतरण व बटांकन त्रुटि सुधार पर, संघर्ष तेज करना होगा।

इन पंचायतों में बडी संख्या में महिलाएं और नौजवान भी शामिल हुए। सभी ने इन काले कानूनों की वापसी तक आंदोलन जारी रखने का संकल्प लिया है। □

दमन के बीच किसान पंचायतों के साथ कृषि मंत्री के गृह जिले में जोर पकड़ता किसान आंदोलन

ग्वालियरः कृषि कानूनों पर सफाई देने का काम भाजपा द्वारा सबसे पहले कृषि मंत्री के गृह जिले ग्वालियर से ही शुरू किया गया था। ग्वालियर, भिंड, मुरैना और श्योपुर से बसों में भरकर लाये गए करीब दो हजार किसानों के बीच करीब आधे घंटे के भाषण के बाद भी कृषि मंत्री नहीं समझा पाए कि, इन तीनों कृषि कानूनों में किसानों के फायदे में क्या है, नतीजे में नए वर्ष के पहले दिन 01 जनवरी से ही, किसान आंदोलन के समर्थन में फूलबाग चौराहे पर धरना शुरू हो गया।

प्रशासन को लगा होगा कि ऐसी सर्दी में कितने दिन टिक पाएंगे आन्दोलनकारी, लेकिन धीरे-धीरे धरना एक महीने, फिर चालीस दिन तक पहुंच गया और लगातार जनसमर्थन भी बढ़ता गया। जनता की ताकत से ही तो सत्ता घबराती है, इसीलिये 31 जनवरी को धरने पर आरएसएस-भाजपा से जुड़े गुंडों ने आकर उत्पात मचाया, किन्तु आंदोलनकारी डटे रहे।

इस दौरान किसान पंचायतों का दौर शुरू किया गया। रायरू, मोहना, में किसान सभा के राष्ट्रीय संयुक्त सचिव बादल सरोज भी इन किसान पंचायतों शामिल हुए। इसके अलावा समुधन, लखनपुरा, बनियातौर, में भी किसान पंचायतें हो चुकी हैं। सीटू के प्रदेश अध्यक्ष रामविलास गोस्वामी, मध्यप्रदेश किसान सभा के संयुक्त सचिव अखिलेश यादव, जितेंद्र आर्य, कमल सिंह, रामबाबू जाटव, बीरबल सिंह चैन, शौकत हुसैन, तलविंदर सिंह, पीपी शर्मा, सुरेन्द्र सिंह, स्वर्ण सिंह, शिद्धेश्वर शर्मा, शिवचरण पटेल, गुरमीत, जसविंदर सिंह डिंगसा, गोपाल तिवारी, आदि ने किसान पंचायतों को संबोधित किया।

18 फरवरी रेल रोको आंदोलन- पूरे देश भर में यह आंदोलन हुआ, ग्वालियर में भी पुलिस की सारी तैयारियों को धता बताकर आंदोलनकारियों ने रेल रोक दी।

49 दिन से लगातार चल रहे धरने और फिर कृषि मंत्री के गृह जिले में रेल रोकी जाने, वह भी दो-दो स्थानों पर, से बौखलाए प्रशासन ने ग्वालियर और डबरा में आंदोलनकारियों पर भीषण दमन किया। यहां तक कि महिलाओं तक को भी नहीं बख्शा। इतने पर भी नहीं रुका प्रशासन और ग्वालियर और डबरा के आंदोलनकारियों को जेल भेज दिया, जेल जाने के लिए महिलाओं ने भी अपने आपको प्रस्तुत किया, लेकिन पुलिस ने उन्हें जेल नहीं भेजा।

इसके बाद अचानक आधी रात में पुलिस और जिला प्रशासन के आला अफसरों की अगुवाई में रात के अंधेरे में आंदोलनकारियों का टेंट उखाड़ कर जब्त कर लिया।

इसके विरोध में 19 फरवरी को किसान आंदोलन में बाहर रहे साथियों के नेतृत्व ने करीब तीन सैकड़ा किसानों ने पुलिस अधीक्षक कार्यालय का घेराव किया, आंदोलन के दबाव में आखिरकार जेल में भेजे गए आंदोलनकारी रिहा हुए। इसके बाद 20 जनवरी को पुनः किसान नेताओं की बैठक हुई और तथा 22 फरवरी को वे सब सामूहिक रूप से कलेक्टर कार्यालय पहुंचे। उनकी मांग थी कि उन्हें कृषि मंत्री के सरकारी बंगले के सामने धरना शुरू करने की अनुमति दी जाए। इस प्रस्ताव से घबराये प्रशासन के आला अफसरों ने अब पुनः फूलबाग चौराहे पर धरना शुरू करने की बात मान ली है, हालांकि अभी तक अनुमति नही मिली है।

झांकरी में हुई किसान पंचायत

झांकरी (भिण्ड): दिल्ली में काबिज मोदी की सरकार द्वारा 3 किसान विरोधी कानून पारित किए जाने के खिलाफ जारी किसान आंदोलन के समर्थन में, गोहद के झाकरी गांव में किसान महापंचायत की गई। इस किसान महापंचायत के मुख्य वक्ता मध्य प्रदेश किसान सभा के राज्य उपाध्यक्ष अशोक तिवारी थे। इस किसान महापंचायत को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि केंद्र सरकार द्वारा भारतीय किसान विरोधी कानून लागू हो जाने से, किसान पूरी तरीके से तबाह हो जाएगा तथा इसमें जो 3 किसान विरोधी कानून हैं, उसमें कंपनियों से करार हो जाने के कारण किसान पूरी तरह से मजदूर हो जाएंगे।

उन्होंने कहा कि किसान संगठनों का स्वामीनाथन आयोग की रिपोर्ट लागू कर लागत का डेढ़ गुना दाम किसानों को अपनी फसल बेचते समय दिए जाने, किसानों पर लादे गए झूठे मुकदमे वापस लेने एवं प्रस्तावित विद्युत विधेयक- 2020 रद्द करने की मांग को लेकर दिल्ली पहुंच मार्गों पर लंबे अंतराल से चल रहा किसान आंदोलन तब तक जारी रहेगा, जब तक कि उनकी मांगें पूरी तरह मान नहीं ली जाती हैं। इसी तरह पूरे, देश में किसान महापंचायतें भी चलती रहेंगी। गोहद के झाकरी गांव में हुयी इस किसान पंचायत ने रेल रोको आंदोलन के दौरान गिरफ्तार किए गए नेताओं को रिहा करने की मांग की एवं ग्वालियर में चल रहे धरना प्रदर्शन को बलपूर्वक हटाए जाने की निंदा की।

किसान महापंचायत में सीधी बाणसागर में एक बस के डूब जाने से हुई मौतों पर शोक संवेदना व्यक्त की गई। अशोक तिवारी के अलावा किसान महापंचायत को प्रेम नारायण माहौर, भूपेंद्र सिंह गुर्जर, शैलेंद्र सिंह गुर्जर, धनीराम कुशवाहा, रशीद, देवेंद्र शर्मा, जवान सिंह गुर्जर, आदि ने भी संबोधित किया। अंत में तहसीलदार को एक ज्ञापन दिया गया जिसमें किसान विरोधी कानून वापस लेने के अलावा स्थानीय मांगों के निराकरण की मांग की गई। एक ज्ञापन राष्ट्रपति के नाम भी तहसीलदार गोहद को दिया गया।

कैलारस में किसान पंचायत

कैलारस (मुरैना): संयुक्त किसान मोर्चा की ओर से देशभर में चलाए जा रहे आंदोलन की कड़ी में कैलारस में भी किसान पंचायत का आयोजन किया गया। यह पंचायत, कृषि विरोधी तीनों काले कानूनों की

वापसी को लेकर आयोजित की गई। इसमें देश व प्रदेश के वरिष्ठ किसान नेताओं के साथ अन्य राजनीतिक कार्यकर्ताओं, नेताओं ने भी भागीदारी की।

किसान पंचायत को संबोधित करते हुए अखिल भारतीय खेत मजदूर यूनियन के राष्ट्रीय सचिव डॉ0 विक्रम सिंह ने कहा कि मोदी सरकार ने खेती को बर्बाद करने के लिए, तीनों कृषि विरोधी काले कानून कोरोना की आड़ में बनाए हैं। इन कानूनों की वापसी की मांग को लेकर किसान लगातार संघर्ष कर रहे हैं। 3 माह से ज्यादा का समय हो गया है। लाखों किसान दिल्ली की पांचों सीमाओं पर जमे हुए हैं। 250 से ज्यादा किसान साथी शहीद हो गए हैं। लेकिन मोदी सरकार कानूनों की वापसी के लिए तैयार नहीं है। उन्होंने कहा कि यह आंदोलन आजादी की लड़ाई के बाद होने वाला ऐतिहासिक आंदोलन है। मोदी जी कितना भी दमन करें, लेकिन अंततः उन्हें कानून वापस लेने ही होंगे। किसानों ने संकल्प किया है कि वह लगातार संघर्ष जारी रखेंगे। उन्होंने किसान महापंचायतों के जरिए बड़ी संख्या में किसानों की लामबंदी करने और संघर्ष तेज करने का आह्वान किया।

इस किसान पंचायत को पूर्व विधायक प्रसिद्ध समाजवादी नेता बाबू सूबेदार सिंह जी एडवोकेट द्वारा संबोधित किया गया। उन्होंने किसानों से आह्वान किया कि हमें इस दायरे को और बढ़ाना है। यह चंबल की भूमि है ,यह संघर्ष की और कुर्बानियों की भूमि है। हमें इसकी गरिमा के अनुरूप संघर्ष को तेज करते हुए, आंदोलनों की वापसी कराते हुए किसानों की जीत सुनिश्चित करना है। उनके अलावा, सबलगढ़ विधानसभा क्षेत्र से विधायक एडवोकेट बैजनाथ कुशवाह ने भी किसान पंचायत को संबोधित किया। उन्होंने कहा यह संघर्ष किसान-विरोधी कानूनों की वापसी के लिए तो है ही , लेकिन संविधान और लोकतंत्र को बचाने के लिए भी है। उन्होंने दोहराया कि संविधान ही एकमात्र ऐसी पुस्तक जिसने हमें बराबरी का अधिकार दिया है। यह सरकार, संविधान को खत्म करना चाहती है। लोकतंत्र को नष्ट करना चाहती है। हमें संविधान और लोकतंत्र को बचाने की लड़ाई भी लड़नी होगी ।

पंचायत में मध्य प्रदेश किसान सभा के प्रदेशाध्यक्ष रामनारायण कुरारिया ने संघर्ष के अनुभवों को साझा करते हुए कहा कि यह धरती की लाज को बचाने का संघर्ष है। हम उसकी अस्मत को नहीं लुटने देंगे । यह लड़ाई हम जरूर जीतेंगे। पूर्व-विधायक सोने राम कुशवाह ने कहा के हम किसानों की लड़ाई में हर संभव भागीदारी करेंगे और किसान संघर्ष आगे बढ़ाएंगे।

किसान सभा के प्रदेश उपाध्यक्ष अशोक तिवारी , भानु प्रताप सिंह, किसान नेता गयाराम सिंह धाकड़, मुरारी लाल धाकड़, किसान कांग्रेस के प्रमोद शर्मा, रामविलास धाकड़, राजाराम बंसल, केशव गोयनर , नाथूराम इंदौरिया, डा0 दशरथ कुशवाहा, बृजमोहन मरैया, राजकुमार सिंघल, शम्मा कुरैशी, राष्ट्रीय किसान मोर्चा के सुमेर शाक्य, बहुजन समाज पार्टी के नंदलाल खरे, डॉक्टर शरीफ कुरैशी, किसान नेता ओम प्रकाश श्रीवास, राम लखन धाकड़, के एन शर्मा, व्यापार मंडल के पूर्व अध्यक्ष राजेश गुप्ता, छात्र नेता राजवीर धाकड़, युवा नेता नरेंद्र सिंह सिकरवार आदि ने किसान पंचायत को संबोधित किया। □

इटावा : किसान पंचायतों का आयोजन
कृषि कानून किसानों के गले का फंदा- सुभाषिणी

संयुक्त किसान मोर्चा के आह्वान पर किसान सभा द्वारा इटावा (उत्तर प्रदेश) में 18-19 फरवरी को विशाल किसान पंचायतों का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पूर्व-सांसद सुभाषिणी अली ने मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए कहा कि मोदी सरकार किसानों के साथ दुश्मनों जैसा बर्ताव कर रही है, शांतिपूर्ण आंदोलन को कुचलने के लिए दमन, बदनाम करने के घिनौने हथकंडे अपना रही है। आंदोलन का समर्थन करने वालों तक को गिरफ्तार कर डराया जा रहा है, बोलने और असहमति के संवैधानिक अधिकारों का गला घोंटा जा रहा है। आंदोलन करना, मोदी-योगी सरकार में अपराध है, आपसी भाईचारे को नष्ट कर जनता को बांटने की साजिश बीजेपी का पुराना हथकंडा है। काले कृषि कानून, किसानों के गले का फंदा हैं। इनसे बीजेपी-आरएसएस का कॉर्पोरेटपरस्त चेहरा बेनकाब हुआ है। इनके खिलाफ किसानों के साथ मिलकर मेहनतकश जनता की संयुक्त लड़ाई है, जो जीत तक जारी रहेगी।

सुभाषिणी ने ताखा एवं यासीनगर में किसान पंचायतों को संबोधित करते हुए, डीजल-पेट्रोल के बेतहाशा बढ़ते दामों को, बड़े पूंजीपतियों को केन्द्र सरकार की खुली छूट का परिणाम बताया। उप्र में जंगल राज है, महिलाएं सुरक्षित नही हैं। हाथरस व उन्नाव में युवतियों की बर्बरतापूर्ण हत्याएं, इटावा में एक महिला की थाने में पिटाई कर महिला से जूतों पर नाक रगड़वाने जैसी शर्मनाक घटनायें हो रही हैं। योगी सरकार भेदभाव और बदले की राजनीति कर रही है। एकजुट संघर्षों से ही मोदी-योगी सरकारों को अन्याय से रोका जा सकता है।

किसान सभा के प्रांतीय महामंत्री मुकुट सिंह ने कहा कि काले कृषि कानून, खेती-किसानी का सर्वनाश कर देश को भूखे मारेंगे। इनसे मंडियां, समर्थन मूल्य, सरकारी खरीद, सस्ती राशन वितरण जैसे किसानों और जनता के कवच हटेंगे।

पंचायतों को किसान सभा के जिलामंत्री संतोष शाक्य, पूर्व जिलाध्यक्ष नाथूराम यादव एवं अमर सिंह शाक्य ने भी संबोधित किया।

ताखा किसान पंचायत की वैद्य विश्राम सिंह व राजाराम सिंह ने तथा यासीनगर में विजय सिंह यादव एवं राधेश्याम शाक्य के अध्यक्षमण्डल ने अध्यक्षता की। सभा को जिलाध्यक्ष रामप्रकाश पोरवाल, पूर्व-जिलाध्यक्ष विश्राम सिंह यादव, प्रेमशंकर यादव, संतोष राजपूत, वीरेन्द्र सिंह यादव, किसान यूनियन के रामविजय, इंद्रपाल सिंह यादव, आदि ने भी संबोधित किया। सकट नरायण, सविता, आशाराम, प्रेमशंकर, डा0 अजय सिंह शाक्य, आदि ने क्रांतिकारी कविताएं पढ़ीं। हजारों की संख्या में स्त्री-पुरुषों ने इन किसान पंचायतों में भाग लिया। □

बिहार के समस्तीपुर और दरभंगा में विशाल किसान महापंचायतें

25 मार्च को बिहार के समस्तीपुर जिले के विभूतिपुर तरुनिया मैदान में और 24 मार्च को उत्तर बिहार के दरभंगा के पोलो मैदान में अखिल भारतीय किसान सभा द्वारा विशाल किसान महापंचायतों का आयोजित किया गया। इन पंचायतों में हजारों महिला किसान और पुरुष किसान शामिल हुए।

समस्तीपुर जिले में हुई किसान महापंचायत को किसान सभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ अशोक ढ़वले, संयुक्त सचिव एन के शुक्ला, बिहार प्रदेश अध्यक्ष ललन चौधरी, बिहार प्रदेश सचिव विनोद कुमार और सीपीआई (एम) विधायक अजय कुमार ने संबोधित किया और इस की अध्यक्षता गंगाधर झा द्वारा की गई।

दरभंगा के पोलो मैदान में हुई किसान महापंचायत में भी हजारों किसान ने भागेदारी की। इस महापंचायत में किसान सभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ अशोक ढ़वले, संयुक्त सचिव एन के शुक्ला और बिहार प्रदेश अध्यक्ष ललन चौधरी मुख्य वक्ता थे। महापंचायत की अध्यक्षता किसान सभा जिला अध्यक्ष सुधीर कांत मिश्रा ने की, और संचालन जिला सचिव श्याम भारती ने किया अन्य नेता रामानुज यादव, महेश दुबे, रामसागर पासवान, दिलीप भगत भी इसमें शामिल रहे।

वक्ताओं द्वारा जनविरोधी, कॉर्पोरेट पक्षीय तीन कृषि कानूनों और चार श्रम सहिताओ व बिजली बिल को किसानो व मजदूरों पर थोपे जाने तथा एमएसपी गारंटी कानून को लागू करने से इनकार करने पर भाजपा कि अगुवाई वाली केंद्र सरकार कि कड़ी निंदा की। साथ ही पेट्रोल डीजल और घरेलु गैस कि कीमत में वृद्धि व देश को अम्बानी और अडानी जैसे कॉर्पोरेट को बेचने के लिए मोदी सरकार को भ्रत्सना की। उन्होंने ऐतिहासिक किसानों के संघर्ष के चार महीने पूरे होने पर संयुक्त किसान मोर्चा के भारत बंद आवाहन को सफल बनाने पर जोर दिया साथ ही 12 अप्रैल को बिहार के प्रत्येक जिलाधिकारी कार्यालय पर राज्यव्यापी जेल भरो संघर्ष का आह्वान भी किया। □

किसान आन्दोलन में उत्तराखंड

-गंगाधर नौटियाल

अखिल भारतीय किसान संघर्ष मोर्चा द्वारा किसान विरोधी काले कानूनो के विरोधी में 26–27 नवम्बर 2020 को दिल्ली चलो के आह्वाहन जिसमें पंजाब, हरियाणा, व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानो द्वारा दिल्ली में भागीदारी के निर्णय के बाद जब केन्द्र सरकार और उसके सहयोगियों द्वारा किसान आन्दोलन को तोड़ने व भ्रमित करने के लिये इस आन्दोलन को केवल पंजाब व हरियाणा के किसानों का आन्दोलन बताया गया, तब इस भ्रम को तोड़ने के लिये सबसे पहले 09 दिसम्बर 2020 को उत्तराखण्ड के ऊधम सिंह नगर से 21 किसानों का पहला जत्था गाजीपुर बॉर्डर पर जाकर धरना में बैठ गया और पुनः 11 दिसम्बर 2020 को 70 किसानों का दूसरा जत्था पांच ट्रेक्टरों व एक ट्रेक्टर में खाद्य सामग्री के साथ गाजीपुर बॉर्डर के लिये रवाना हुआ जिसे रामपुर में पुलिस ने रोक दिया, रात भर रामपुर में ही धरना देने के बाद दूसरे दिन ये जत्था दूसरे रास्ते से गाजीपुर बॉर्डर पर जाकर धरने में शामिल हो गया, उसके बाद लगातार रोजाना 50 किसान धरने में भागीदारी करते रहे, इस दौरान 03 फरवरी 2020 को मंगलोर (रुड़की) जनपद हरिद्वार, 16 फरवरी 2020 को डोईवाला, जनपद देहरादून, 11 मार्च 2021 को रुद्रपुर जनपद ऊधमसिंह नगर व 07 अप्रैल 2021 को पौंटा साहब जनपद सिरमौर (हिमाचल प्रदेश) में किसान महापंचायतों में किसान सभा के प्रान्तीय व जिले के नेतृत्व के साथियों ने बड़ी संख्या मेंकिसान जनता के साथ भागीदारी की, इस दौरा न किसान मोर्चा की हर काल पर राज्य के ऊधम सिंह नगर, हरिद्वार, देहरादून, टिहरी, पौड़ी, रुद्रप्रयाग, अल्मोड़ा, चमोली जनपदों में लगातार गतिविधियां हो रही हैं, आन्दोलन को गांव गांव तक ले जाने का लगातार प्रयास जारी है, जिसमें ऊधम सिंह नगर व रुद्रप्रयाग जनपदों में जनता के बड़े हिस्से तक आन्दोल न पहुंचाने में सफलता हासिल हुई है, ऊधम सिंह नगर में तो लगभग हर रोज कोई न कोई कार्यक्रम अवश्य होता है, अन्य जनपदों में भी आन्दोलन को ग्रास रुट पर ले जाने के प्रयास लगातार जारी हैं। □

इतिहास के पन्नों से

पंजाब में बेटरमेंट लेवी के खिलाफ संघर्ष

बेटरमेंट लेवी के खिलाफ पंजाब के किसानों का 1959 का बहादुरीपूर्ण संघर्ष, भारतीय किसान आंदोलन के इतिहास का एक और शानदार अध्याय है। तेलंगाना के युग परिवर्तनकारी आंदोलन के बाद, यह आजादी के बाद का किसानों का सबसे बड़ा संघर्ष था, जिसमें किसान जनता की व्यापकतम संभव एकता कायम हुई थी और किसान अपने संघर्ष में खेत मजदूरों का तथा राजनीतिक संबद्धताओं से ऊपर उठकर, आबादी के अन्य सभी तबकों का समर्थन हासिल करने में कामयाब रहे थे।

पंजाब के किसानों के इस शांतिपूर्ण संघर्ष में, किसानों तथा खेत मजदूरों के लगातार जमा होते रहे असंतोष को अभिव्यक्ति मिल रही थी। यह गहराते कृषि संकट के खिलाफ किसान जनता की नाराजगी की अभिव्यक्ति थी। यह संकट सरकार की जनविरोधी नीतियों से पैदा हुआ था, जिनका मकसद संकट का ज्यादा से ज्यादा बोझ किसानों के सिर पर डालना था। बेशक, किसानों के इस असंतोष को बेटरमेंट लेवी विरोधी संघर्ष में अभिव्यक्ति मिल रही थी, लेकिन यह असंतोष आजादी के बाद से अपनायी गयी जनविरोधी नीतियों के लगातार बढ़ते दुष्परिणामों से पैदा हुआ था।

आजादी के बाद से, पंजाब की जनता पर कर का बोझ, प्रतिव्यक्ति 14 रु0 से बढ़ाकर, प्रतिव्यक्ति 25 रु0 कर दिया गया था। ऋणग्रस्तता तेजी से बढ़ रही थी। इसके अलावा, लाखों की संख्या में बंटाईदारों आदि से उनकी खेती की जमीनें छिन गयी थीं तथा उन्हें खेत मजदूरों की कतारों में धकेल दिया गया था, जिससे बेरोजगारी बहुत बढ़ गयी थी। बाजार की ताकतें भी पंजाब के किसानों को जमकर लूट रही थीं।

1952 में, भाखड़ा नहर प्रणाली के पूरी होने से पहले, पंजाब सरकार बेटरमेंट लेवी लगाने का कानून लायी थी। इस लेवी से होने वाली वसूली से, इस नहर प्रणाली पर होने वाले पूरे खर्चे को बटोरा जाना था। कम्युनिस्ट पार्टी और किसान सभा, शुरूआत से ही इस कानून का विरोध करती आयी थीं। उनका कहना था कि इस कर के वसूल किए जाने के बाद, किसानों के पास खेती में निवेश करने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं और जहां तक गरीब किसानों का सवाल है, उन्हें तो अपनी जमीनें ही बेचनी पड़ जाएंगी। लेकिन, कांग्रेसी सरकार ने अनसुनी कर दी और अग्रिम भुगतान के रूप में बेटरमेंट लेवी वसूल करने के लिए, 1959 की जनवरी में एक अध्यादेश जारी कर दिया। सरकार की इस भड़काऊ कार्रवाई ने किसानों के गुस्से की आग में घी डालने का काम किया।

1957 के आखिर तथा 1958 के शुरू में, जब इस लेवी के सिलसिले में एसेसमेंट नोटिस जारी किए गए थे, पूरे राज्य में किसान इसके खिलाफ उठ खड़े हुए। जन-ज्ञापनों, हस्ताक्षर अभियानों, कन्वेंशनों, कान्फ्रेंसों व प्रदर्शनों आदि, अनेकानेक रूपों में उनकी नाराजगी सामने आयी। 11,000 से ज्यादा किसानों ने निजी तौर पर, इन एसेसमेंट नोटिसों के खिलाफ कानूनन आपत्तियां जर्द करायी थीं। कम्युनिस्ट पार्टी और किसान सभा ने 1958 की फरवरी में सरकार को इस संबंध में एक ज्ञापन दिया था। बाद में चंडीगढ़ में एक सर्वदलीय कन्वेंशन हुई और एक सर्वदलीय कमेटी का गठन किया गया। इस सर्वदलीय कमेटी ने राज्य सरकार को ज्ञापन दिया। 1958 के सितंबर में राज्य भर में किसानों के प्रदर्शन हुए, जिनमें एक लाख से ज्यादा किसानों ने हिस्सा लिया। किसान सभा ने सरकार की एक-एक दलील को, पुख्ता चुनौती दी। अपनी दलीलों से उसने, राज्य के तमाम जनतंत्रकामी लोगों का समर्थन हासिल करने में कामयाबी पायी।

अब किसान सभा ने सभी स्तरों पर कार्रवाई कमेटियां गठित कीं और सत्याग्रह के स्वयंसेवकों की भर्ती शुरू हो गयी। इन सभी कदमों को जनता का जबर्दस्त समर्थन मिला। जनवरी के तीसरे सप्ताह तक, 10 हजार से ज्यादा स्वयंसेवक भर्ती हो चुके थे, जो लक्ष्य के लिए हर तरह की कुर्बानी देने के लिए तैयार थे। एक राज्यस्तर की कार्रवाई कमेटी का गठन किया गया, जो भूमिगत रहकर काम कर रही थी।

1959 की जनवरी में, पंजाब में खाद्यान्न की स्थिति खराब हो गयी। 1958 में किसानों को अपना गेहूं 34 रु0 प्रति क्विंटल की दर से बेचने के लिए मजबूर किया गया था और इसके छः-सात महीने बाद ही खेत मजदूरों तथा गरीब किसानों को, इससे दुगने दाम पर अनाज खरीदना पड़ा। न तो सरकार ने कोई भंडार बनाए थे और न ही कोई समुचित वितरण व्यवस्था खड़ी की थी। खाद्यान्नों की जो कीमतें घोषित की जाती थीं, कागजों पर ही रह जाती थीं। कम्युनिस्ट पार्टी तथा किसान सभा ने पहल कर के एक जनता खाद्य कमेटी बनायी ताकि, आंदोलन शुरू किया जा सके। इस आंदोलन में हजारों की संख्या में खेत मजदूरों, औद्योगिक मजदूरों, शहरी गरीबों तथा मध्य वर्ग के लोगों को भी गोलबंद किया गया। सरकार की जनविरोधी खाद्य नीति ने, खेत मजदूरों तथा शहरी जनता की हमदर्दी, किसानों के पक्ष में कर दी, जो बेटरमेंट लेवी विरोधी संघर्ष में लगे हुए थे।

किसानों के लिए नोटिस जारी किए जाने पर, 21 जनवरी 1959 से चार जिलों में बेटरमेंट लेवी विरोधी संघर्ष शुरू हो गया। दो हफ्ते में यह आंदोलन चार और जिलों में फैल चुका था। इसके बाद, यह आंदोलन सभी 9 प्रभावित जिलों में फैल गया और थोड़े से ही अर्से में इस आंदोलन ने पूरे पंजाब का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। सत्याग्रहियों के जत्थे जब गांवों में जाते थे, पूरा-पूरा गांव उनका स्वागत करने के लिए जमा हो जाता और जब वे गांव में घूमते थे, हजारों लोग उनके साथ हो लेते थे। इस आंदोलन के बीच एक नया सांस्कृतिक जागरण भी देखने को मिल रहा था। जगह-जगह के लड़के-लड़कियां, किसानों की दुर्दशा पर और संघर्ष के दौरान देखने को मिल रही उनकी बहादुरी पर, गीत रच रहे थे और सभाओं आदि में गा रहे थे।

गरीब और मध्यवर्गीय किसान, इस आंदोलन में शुरू से ही शामिल रहे थे, जबकि धनी किसान बाद में जाकर इस आंदोलन के साथ जुड़े। हालांकि, खेत मजदूर इस बेटरमेंट लेवी से सीधे प्रभावित नहीं हो रहे थे, फिर भी उन्होंने एकजुटता का प्रदर्शन करते हुए गिरफ्तारियां दीं। खाद्य आंदोलन के लिए किसान सभा के समर्थन और मजदूरी में बढ़ोतरी तथा भूमि के वितरण की खेत मजदूरों की मांगों ने भी इस आंदोलन में तेजी पैदा की। सैकड़ों की संख्या में नम्बरदार (राजस्व संग्रहकर्ता), पंच तथा सरपंच, इस आंदोलन में शामिल हो गए। बहुत से नम्बरदारों ने बेटरमेंट लेवी जमा करने की पर्चियां ही फाड़ दीं। इस आंदोलन के दौरान, दो महीने तक मंत्रिगण तथा कांग्रेस पार्टी के नेता, गांवों में सभाएं करना तो दूर, गांवों में घुस तक नहीं पाए। गांव के स्तर पर सभी पार्टियां, किसान सभा के नेतृत्व में छेड़े गए इस आंदोलन को अपना समर्थन दे रही थीं। फरवरी के आखिर तक आते-आते, पूरे राज्य में वातावरण आंदोलित हो गया और पूरे राज्य की जनता की बेटरमेंट लेवी विरोधी संघर्ष में गहरी दिलचस्पी हो गयी।

इस संघर्ष में विभिन्न रूपों में लाखों किसान शामिल हुए। वे प्रदर्शनों में शामिल हुए, गांवों में निकलने वाली प्रभातफेरियों में शामिल हुए, सत्याग्रहियों के स्वागत कार्यक्रमों में शामिल हुए, सत्याग्रहियों पर थोपे गए जुर्मानों के वसूल किए जाने के प्रतिरोध में शामिल हुए, संघर्ष का संदेश घर-घर पहुंचाने में शामिल हुए और सरकार के तमाम दमनकारी कदमों का मुकाबला करने में शामिल हुए। आंदोलन ने सरकार को पूरी तरह से बचाव पर डाल दिया। सरकार ने किसानों के बीच फूट डालने की भी कोशिशें की।

बहरहाल, जब कांग्रेसी प्रचार, रियायतों व वादों के हथियार से इस आंदोलन को कमजोर नहीं कर पाए, सरकार ने भीषण दमन का हथियार आजमाया। किसान सभा के तथा कम्युनिस्ट पार्टी के सभी कार्यकर्ताओं के खिलाफ गिरफ्तारी के वारंट जारी कर दिए गए। लेकिन, सरकार उन्हें गिरफ्तार करने में विफल रही। अपनी इस नाकामी से बौखलायी सरकार ने सशस्त्र पुलिस से बहुत सारे गांवों की नाकेबंदी करा दी। इस नाकेबंदी में गांवों वालों को मशीनगनों के निशाने पर रखा जा रहा था, ताकि लोगों की आवाजाही को रोका जा सके। इन सैन्य बलों ने, सत्याग्रहियों पर लगाए गए जुर्माने वसूल करने के नाम पर, पूरे के पूरे गांवों को लूटा और उनके सामान की नीलामियां करा दीं। किसानों और सत्याग्रहियों को घसीट-घसीट कर पुलिस थानों में ले जाया गया और निर्ममता के साथ मारा-पीटा गया। सरकारी अफसरों ने कानून अपने हाथ में ही ले लिया और न्यायपालिका तथा कार्यपालिका को, सत्ताधारी पार्टी के हाथों का खिलौना बना दिया गया। किसी भी कार्रवाई के लिए कोई लिखित आदेश दिए ही नहीं जाते थे। अफसर पूरी तरह से अपनी मनमानी कर रहे थे। लाठीचार्ज, आंसू गैस छोड़ना, गोलीबारी और लूट-पाट, आए दिन की बात हो गयीं। पुलिस के साथ मुठभेड़ के सरासर झूठे केस बनाकर, सैकड़ों स्त्री-पुरुषों को गिरफ्तार कर लिया गया। जलंधर जिले को पुलिस के दमन की सबसे ज्यादा झोक झेलनी पड़ी। बहरहाल, पुलिस ने जब गांवों को घेरा, महिलाओं ने इस चुनौती को स्वीकार कर, पुलिस का जोरदार मुकाबला किया। उन्होंने इस पुलिस दमन के सामने, अतुलनीय बहादुरी का परिचय दिया। कम्युनिस्ट पार्टी तथा किसान सभा के अनेक कार्यकर्ताओं को भगोड़ा घोषित कर, उनकी संपत्तियां जब्त कर ली गयीं।

किसान सभा के दफ्तर का काम करना नामुमकिन हो गया। कम्युनिस्ट पार्टी के दैनिक, ***नवां जमाना*** का प्रकाशन बंद हो गया क्योंकि उसके सारे के सारे स्टॉफ को गिरफ्तार के जेल भेज दिया गया था। लेकिन, जनता का जोश इतना जबर्दस्त था कि पार्टी के मुखपत्र के सारे स्टॉफ के गिरफ्तार होने पर, दो ही दिन में उनकी जगह लेने के लिए कितने ही लोग खड़े हो गए और इसके फौरन बाद फिर से अखबार का प्रकाशन शुरू हो गया।

सरकार के इस दमनचक्र से राज्य की समूची जनता के बीच भारी रोष फैल गया और सरकार के लिए आंदोलन के खिलाफ यह दमनचक्र जारी रखना ही असंभव हो गया। पूरा का पूरा प्रशासन ही ठप्प होकर रह गया था। सरकार के पास इस आंदोलन के सामने हार मानने के सिवा और कोई विकल्प ही नहीं रह गया था। आखिरकार, मुख्यमंत्री ने बेटरमेंट लेवी घटाने समेत, किसान सभा की मांगों को स्वीकार कर लिया। 22 मार्च 1959 को इस संघर्ष को वापस ले लिया गया।

इस संघर्ष के दौरान 19,000 स्वयंसेवकों ने जिला अदालतों के काम-काज में बाधा डालकर सत्याग्रह किया। 10 हजार स्वयंसेवक जेलों में डाले गए और 3 हजार को पुलिस ने बुरी तरह से मारा-पीटा और सैकड़ों को पुलिस थानों में अमानवीय यातनाएं दी गयीं। आठ साथी, जिनमें तीन महिलाएं भी शामिल थीं, पुलिस की गोलीबारी में शहीद हो गए। एक साथी की पुलिस की यातनाओं से हवालात में ही मौत हो गयी जबकि दो अन्य की जेल में रहते हुए मौत हुई। जिस रोज आंदोलन के वापस लिए जाने की घोषणा हुई उस दिन भी, 250 सत्याग्रह चंडीगढ़ में धरना देने के लिए पहुंचे थे, जबकि 3 हजार अन्य सत्याग्रही, राज्य के विभिन्न जिलों की जिला अदालतों पर पहुंचे थे और वहां धरना दे रहे थे।

इस आंदोलन का बिहार तथा राजस्थान जैसे अन्य राज्यों में भी किसान आंदोलन पर असर पड़ा। अपवादस्वरूप बहुत दूर-दराज के इक्का-दुक्का गांवों को छोड़कर, सरकार कहीं भी बेटरमेंट लेवी जमा नहीं कर पायी थी। इस आंदोलन ने, किसान जनता के बीच हिंदुओं व सिखों के बीच एकता कायम करने के जरिए और किसानों तथा खेत मजदूरों के बीच एकता के जरिए, सांप्रदायिक ताकतों पर भी तगड़ी चोट की थी। इस आंदोलन से उन ताकतों को भी धक्का लगा, जो ग्रामीण तथा शहरी आबादियों के बीच खाई पैदा करने की कोशिश कर रही थीं। इस संघर्ष ने किसान जनता की मांगों को, शहरी आबादी का समर्थन दिलाया था। इस संघर्ष ने पंजाब की जनता और आगे चलकर हरियाणा राज्य बने क्षेत्र की जनता के बीच एकता को भी मजबूत किया। इस आंदोलन से, कम्युनिस्ट पार्टी तथा किसान सभा को नये-नये क्षेत्रों में पांव फैलाने का मौका मिला और वे कांग्रेस पार्टी तथा उसकी नीतियों के एक बलशाली विरोध के रूप में सामने आए। □

हरियाणा की किसान महापंचायतें

मूल्य : 20 रुपये

अखिल भारतीय किसान सभा

36, केनिंग लेन (पंडित रविशंकर शुक्ला लेन) नई दिल्ली-110001
फोन व फैक्स : 011-23782890 ई-मेल : kisansabha@gmail.com

प्रोग्रेसिव प्रिंटर्स, ए 21, झिलमिल इंडस्ट्रियल एरिया, जी.टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-110095